पंचम अध्याय

समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास

पूर्ववर्ती अध्याय में विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों के अध्ययन के पश्चात् हिन्दी और गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत अध्याय का प्रतिपाद्य है । जैसा कि प्रथम अध्याय के विवेचन से प्रकट है कि समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों से हमारा आशय उस कोटि के उपन्यासों से है जिसमें ऐतिहासिकता और औपन्यासिक कला दोनों का सम्यक् ध्यान रखा गया है और कलागत आवश्यकता की पूर्ति के लिये पर्याप्त मात्रा में कल्पना का सहारा लिया गया है । स्वाभाविक है कि ऐसे उपन्यासों में पूर्णतया इतिहास तो नहीं है किन्तु ऐतिहासिक तथ्य की प्रायः रक्षा की गयी है । दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि एक उत्तम कला का शिल्प की दृष्टि से इस कोटि के उपन्यासों में विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों की तुलना में अधिक निखरा हुआ रूप दिखाई पड़ता है । हिन्दी और गुजराती में इस प्रकार के लगभग शताधिक उपन्यास लिखे गये हैं । विवेचन की सीमाओं को ध्यान में रखते हुए तथा कृतियों एवं कृतिकारों के साहित्यिक महत्त्व व गौरव को ही दृष्टि पथ में रखते हुए प्रस्तुत अध्याय में केवल प्रतिनिधि-रचनाओं को ही अनुशीलन का आधार बनाया गया है जिसमें ऐतिहासिक कालक्रम पर नहीं किन्तु रचना के अन्तः सत्व पर ही ध्यान दिया गया है । सूची इस प्रकार है :-

हिन्दी के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास :

१	गढ कुंडार	: वृन्दावनलाल वर्मा	१९२७
२	मृग नयनी	: वृन्दावनलाल वर्मा	१९५०
३	सिंह सेनापति	: राहुल सांकृत्यायनः	१९५२

४	वैशाली की नगरवधू	: चतुरसेन शास्त्री	१९५८
५	सोमनाथ	: चतुरसेन शास्त्री	१९५४
६	चीवर	: रांगेय राघव	१९५१
७	बाणभट्ट की आत्मकथा	: हजारी प्रसाद द्विवेदी	१९४६
८	बेक्सी का मनार	: प्रतापनारायण श्रीवास्तव	१९५६
९	आचार्य चाणक्य	: सत्यकेतु विद्यालंकार	१९५६
१०	दिग्विजय	: गुरुदत्त : तृतीय सं०	१९६८
११	पुष्यमित्र	: मिश्रबन्धु	१९२०

गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास

१	गुजरातनो नाथ	: क० मा० मुंशी	१९१९
२	जयसोमनाथ	: क० मा० मुंशी	१९४४
३	पृथ्वी वल्लभ	: क० मा० मुंशी	१९२१
४	नीलकंठनुं बाण	: चू० व० शाह	१९४४
५	चौलादेवी	: धूमकेतु	१९४१
६	राजसंन्यासी	: धूमकेतु	१९४२
७	देश दीवान	: आचार्य गुणवंतराय	१९३७
८	कुम कुम अने आशका	: चुनीलाल मडिया	१९६२
९	रा गंगा नलियो	: मनवेरचंद मेघाणी	१९३९
१०	विक्रमादित्य हेमू	: जयभिक्खू	१९५५
११	करण घेलो	: न० व० तु० म० मेहता	१८६६

विवेचनगत सुविधा तथा अनावश्यक विस्तार के निवारण के लिये इन रचनाओं पर अलग अलग विचार न करके इनके शिल्प और इतिहास पक्ष का समग्रतया अनुशीलन करना अधिक उपयुक्त होगा।

कथावस्तु : (हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यास)

प्रारंभ में प्रस्तुत सूची से स्पष्ट है कि इस कोटि की प्रतिनिधि रचनाओं में श्री वृंदावनलाल वर्मा के दो उपन्यास " गढ कुंडार " और " मृगनयनी " आते हैं। उनके विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों का अनुशीलन पूर्ववर्ती अध्याय में किया जा चुका है। प्रस्तुत सूची के आधार पर कहा जा सकता है कि " गढ कुंडार " " मृगनयनी " और " अेक्सी का मजार " तथा "सोमनाथ " को छोडकर शेष सात उपन्यास प्राचीन हिन्दू काल से सम्बन्धित हैं। इनमें से वैशाली की नगरवधू सातवीं-आठवीं शताब्दी की सामन्ती विलासिता के जीवन को अंकित करता है किन्तु शेष " चीवर "," पुष्यमित्र ", " आचार्य चाणक्य ", " दिग्विजय ", " बाणभट्ट की आत्मकथा ", " सिंह सेनापति " प्राचीन भारतीय इतिहास के गौरव पूर्ण पक्षों को प्रतिबिम्बित करते हैं। अतः युगीन परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय चेतना को इनकी प्रेरक भूमि कहा जा सकता है। " गढ कुंडार " तेरहवीं शताब्दी के राजपूत सामन्तों के संघर्ष की कथा को लेकर लिखा गया है। 'सोमनाथ' मुहम्मद गजनवी के आक्रमण और भीमदेव के संघर्ष के गौरवपूर्ण कथानक को लिये हुए है। " अेक्सी का मजार " उपन्यास मध्यकाल और आधुनिक युग के सन्धिकालीन युग को प्रस्तुत करता है, जिसमें सन् १८५७ के स्वाधीनता संग्राम की कथावस्तु को दिल्ली के सम्राट बहादुर शाह को केन्द्र में रख कर उपस्थित किया गया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि इस कोटि के उपन्यास विविध युगों की विषय वस्तु से सम्बन्धित होते हुए भी भारतीय जनमानस की किसी न किसी चेतना के ऐतिहासिक सत्य को समेटे हुए हैं।

'गढ कुंडार' १३वीं शताब्दी के अंतिम भाग के एक क्षेत्र विशेष के गौरवपूर्ण इतिहास की कहानी को लिये हुए है। कुंडार गढ का अंतिम राजा हरमतसिंह खैंगार, जिसके अधीन कई बुंदेले सरदार थे, के साथ, बुंदेलों के खुले संघर्ष की घटनाओं को दो प्रासंगिक प्रणय गाथाओं से सम्बद्ध

करके (उसकी कथावस्तु को) प्रस्तुत किया गया है । इसके कारण प्रस्तुत कथावस्तु रोचक एवं आकर्षक बन गई है । कुतूहलपूर्ण रोमांस की सृष्टि के कारण यह उपन्यास सरस और स्पंदनशील बन गया है । इन दो प्रेमी युग्मों का विवाह और सामाजिक रूढ़ियों का विरोध, इसके कारण पात्रों में जिस अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि हुई है, उससे कथावस्तु और भी मनोज्ञ हो गयी है । उपन्यास की मुख्य कथा पूर्णतया ऐतिहासिक है, अधिकांश पात्र भी इतिहास से सिद्ध हैं, केवल नाम मात्र में हेरफेर है । गोरे लाल तिवारी के " बुंदेल खंड का संक्षिप्त इतिहास " के अनुसार उपन्यास के खेतसिंह का नाम खूब सिंह है ।[1] हेमवती के काल्पनिक नाम को स्वयं उपन्यासकार ने स्वीकार किया है ।[2] इसके अतिरिक्त कुछ अन्य ऐतिहासिक मान्यताओं के सम्बन्ध में श्री वर्मा जी ने अपने निजी दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है ।[3] अतः निष्कर्ष रूप में हम कह सकते हैं कि इस उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों के साथ यथेष्ट कल्पना की संगति बैठाई गई है ।

कथावस्तु का संघटन भी सुसम्बद्ध एवं सुगठितता के साथ हुआ है । वास्तव में, कथावस्तु का विविध दिशाओं में प्रसार एवं उसका सम्यक् आकलन वर्माजी की अपनी विशेषता है । डा० राम विलास शर्मा के इस कथन से हम पूर्णतया सहमत हैं — " वर्माजी इस युग के सब से अच्छे कहानी कहने वाले हैं । जहाँ और उपन्यासकार कथानक की ओर उदासीन रहने लगते हैं और रस के लिये तरह-तरह की रसिकता का सहारा लेने लगते हैं, वहाँ वर्माजी अपनी सरस कथा से पाठक का मन बाँधे रहते हैं और अंत तक उसकी उत्सुकता ताजी रखते

१ श्री गोरे लाल तिवारी, बुंदेलखण्ड का संक्षिप्त इतिहास, पृ० १२०-१२१

२ श्री वर्मा, गढ़ कुंडार, परिचय, पृ० १-४

३ वही

है । " [1]

" मृगनयनी " उपन्यास ग्वालियर के राजा मानसिंह और राई गाँव की गूजर बाला निन्नी (मृगनयनी) के विवाह और सिकन्दर लोदी के ग्वालियर पर आक्रमण और मानसिंह द्वारा उसकी रक्षा के लिये किये गये संघर्ष की कहानी को लेकर लिखा गया है । निन्नी की सहेली लाखी और उसके भाई अटल की प्रणय गाथा इसे आद्योपान्त रोचक बनाने में सहायक होती है । निन्नी और लाखी के सौन्दर्य की ख्याति से आकृष्ट हो गयासुद्दीन, मुहम्मद बघरा आदि के आक्रमण उपन्यास में आद्योपान्त कुतूहल की सृष्टि करते हैं । ग्वालियर गजेटिर के अनुसार १४९२ ई० में मृगनयनी के शौर्य से मुग्ध हो मानसिंह का उसके साथ विवाह करना इतिहास सम्मत है । [2] मानसिंह के रानियों की कथा एवं उत्तराधिकार की कथा किंवदंतियों के आधार पर ग्रहण की गई हैं । [3] लाखी और अटल की प्रासंगिक कथा कल्पनाश्रित है । इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में ऐतिहासिक तथ्यों की पूर्ण रक्षा के साथ कल्पना का सुसंगत एवं सामंजस्यपूर्ण उपयोग किया गया है ।

कथावस्तु का संयोजन लेखक ने बहुत ही सुसम्बद्ध रूप में किया है । मुख्य कथा को रोचक और आकर्षक बनाने में अटल और लाखी की रोमांसपूर्ण कथा का योगदान महत्त्वपूर्ण है । यद्यपि यह उपकथा है, फिर भी इसका महत्त्व मुख्यकथा से कम नहीं है, क्योंकि मुख्य कथा के साथ आद्योपान्त चलती हुई यह भी पाठक के मन पर अपना अक्षुण्ण प्रभाव डालती है । संक्षेप

१ डा० रामविलास शर्मा, वृंदावनलाल वर्मा, न्यायपथ, अप्रैल, १९६०

२ श्री शिवकुमार मिश्र, वृंदावनलाल वर्मा, पृ० २४१

३ श्री वृन्दावनलाल वर्मा, मृगनयनी, परिचय, पृ० ६

में, उपन्यास की कथावस्तु इस कुशलता के साथ संघटित की गई है कि इसमें पाठक का कुतूहल आद्योपान्त बना रहता है ।

" सिंह सेनापति " वैशाली के सिंह का तक्षशिला में आचार्य बहुलाश्व के यहाँ अध्ययन, पार्श्व-युद्ध में तक्षशिला की विजय में उसके सहयोगी होने, आचार्य बहुलाश्व की कन्या रोहिणी के साथ उसका विवाह, वैशाली पर मगध के आक्रमण करने पर उसे पराजित कर वैशाली-विजय के यशोभागी बनने की मुख्य कथा पर आधारित है । कपिल और क्षेमा की प्रणय-कथा इसकी प्रासंगिक कथा है ।

" अंगुत्तर निकाय " के अनुसार सिंह के वैशाली का सेनापति होना ही इतिहास सम्मत है । इसमें उसके पहले जैन धर्मावलम्बी होने एवं बाद में बौद्ध धर्म की दीक्षा ग्रहण करने का उल्लेख है ।[1] शेष घटना-शृंखला पाली, संस्कृत, तिब्बतीय और जैन साहित्य में प्राप्य गणराज्यों के वर्णन के आधार पर कल्पित है ।[2] उपन्यास में बिम्बसार, अजातशत्रु, महावीर और गौतम बुद्ध ऐतिहासिक पात्र हैं, किन्तु उपन्यास में इनके अवतरण से लेखक पाठकों के सम्मुख उपन्यास के कथावस्तु की ऐतिहासिकता की भ्रांति ही उत्पन्न करता है । इसकी मुख्य कथा तो बहुत ही अल्प है । लेखक इसे अवान्तर बातचीत और विनोदों के माध्यम से अपनी लक्ष्य-सिद्धि तक पहुंचाता है । शिल्प की दृष्टि से कथानक में कौतूहल और मनोवैज्ञानिकता का अभाव है ।[3] प्रेम और युद्ध के कतिपय दृश्यों का कथावस्तु की रोचकता में अवश्य योगदान रहा है ।

१ डा० रामदरश मिश्र, हिन्दी उपन्यास, पृ० १६४

२ सिंह सेनापति, विषय प्रवेश, पृ० १२

३ डा० रामदरश मिश्र, हिन्दी उपन्यास, पृ० १६५

" वैशाली " के सामन्त महानामन की पोषिता पुत्री अनिंद्य सुन्दरी अम्बपाली को जनपद कल्याणी बनने को बाध्य किये जाने और उसकी प्रतिक्रिया में अम्बपाली के निवेदन पर मगध सम्राट् बिम्बसार द्वारा वैशाली पर आक्रमण और उसकी विजय की मुख्य कथा को लेकर आचार्य चतुर सेन शास्त्री ने " वैशाली की नगरवधू " उपन्यास की रचना की है। चन्द्रप्रभा और सोम की प्रेम कथा तथा आगे चल विदूडम के साथ चन्द्रप्रभा के विवाह की दो प्रासंगिक कथाएं भी इसमें विद्यमान हैं।

अम्बपाली का वैशाली की नगर वधू बनना, चम्पा पर मगध की विजय, प्रसेनजित को राज्यच्युत का विदूडम का स्वयं सम्राट् बनना, मगध का वैशाली पर आक्रमण, एवं अम्ब पाली का बौद्ध भिक्षुणी होना पूर्णतया इतिहास सम्मत हैं।[1] इच्छा विरुद्ध वैशाली की नगरवधू बनने पर प्रतिशोध के लिये अजातशत्रु और वैशाली के विनाश का अम्बपाली द्वारा निश्चय और मगध सम्राट् बिम्बसार को बादरायण के आश्रय में मिलकर उसे वैशाली पर आक्रमण के लिये उत्तेजित करना इतिहास अविरोधी कल्पना एवं संभाव्यता के आधार पर गृहीत तथ्य हैं।[2] अधिकारिक कथा के साथ उपन्यास में उपरिनिर्दिष्ट प्रासंगिक कथाएं एवं कितनी ही घटनाएं तथा दृश्य भी विद्यमान हैं जो सर्वथा काल्पनिक हैं, जिनका मुख्य कथा के साथ सम्बन्ध सायास स्थापित किया गया है।

चम्पा के राजा दधिवाहन की राजकुमारी चन्द्रप्रभा सोम और विदूडम की कथा में ऐतिहासिक तथ्य की सर्वथा उपेक्षा कर दी गई है। जैन धर्म

---

१ (i) दीर्घनिकाय, १२७

(ii) डा० विद्याभूषण भारद्वाज, चतुरसेन के उपन्यासों में इतिहास चित्रण, पृ० ७०,७२, ७३।

२ डा० विद्या भूषण भारद्वाज, चतुरसेन के उपन्यासों में इतिहास चित्रण, पृ० ५६-५७

के ग्रन्थों के अनुसार चंपा के राजा दधिवाहन की पुत्री चंदनबाला थी । अपने पिता की मगध के अभियान में मृत्यु के पश्चात् उसने अपना जीवन अर्हत महावीर से दीक्षा लेकर जैन धर्म के आर्या संघ की आचार्या और महासति चंदनबाला के रूप में व्यतीत किया है ।[1] इसी प्रकार बिम्बसार का वैशाली में अम्बपाली के प्रासाद में विलासहीन होना और अन्त में उसके पुत्र को मगध सम्राट् के रूप में स्वीकार करना भी इतिहास सम्मत नहीं है । बिम्बसार का उत्तराधिकारी मगध सम्राट् बिम्बसार और चेलना का पुत्र अजातशत्रु है ।[2]

उपन्यास के कथावस्तु का संघटन यद्यपि बहुत ही मनोरंजन-पूर्ण घटनाओं से हुआ है किन्तु इसके गठन में काफी शिथिलता आ गई है । प्रथम भाग के आरम्भ में मुख्य कथा के आरम्भ करने के पश्चात् लेखक प्रासंगिक कथा को ही विकसित करने में लग जाता है, दूसरे भाग में जाकर वह मुख्य कथा का सूत्र फिर से ग्रहण करता है । " मंजुवाणी " और छायापुरुष जैसी कई कौतुक पूर्ण घटनाओं के द्वारा लेखक ने इसमें ऐय्यारी और तिलस्मी उपन्यासों की छाया भी व्यक्त की है । " महामिलन " और " सम्मान्य अतिथि " जैसे प्रसंगों के अतिरिक्त कुतूहल का सम्यक् निर्वाह नहीं हो पाया है । कतिपय अति प्राकृतिक और अस्वाभाविक घटनाओं का समावेश इसकी औपन्यासिक महत्ता

१ (i) श्री रतिभानुसिंह नाहर, प्राचीन भारत का राजनीतिक और सांस्कृतिक इतिहास, पृ० १७०
" पद्मावती तथा दधिवर्मन से उत्पन्न चन्दना जैन भिक्षुणी हुई उपन्यास की चन्द्रप्रभा का नाम इतिहास में चन्दना दिया है । "
(ii) श्री नंदलाल ल० वकील, श्री महावीर स्वामी चरित्र, पृ० २०६-२१७ और २६८ पर
(ख) श्री जैन आत्मानंद सभा, आदर्श जैन स्त्री रत्नों, पृ० १५५-१७१

२ श्री वी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० १८२
" जैन लेखकों के मतानुसार बिम्बिसार के कई पुत्र थे, कुणीक या अजात शत्रु,
– आगे देखिए

के उपयुक्त नहीं है । खेचरी विद्या से उदयन का अम्बपाली के आवास में अवतरण, चंपारण्य में सोम और उसके साथियों का असुर का अनुगमन, असुरपुरी एवं चंपा में कुंडनी का सब के देखते सर्प दंश लेना, तथा यह देख लेने पर भी शम्बर एवं दधिवाहन का मृत्यु-चुम्बन, मंजुघोषा का स्वतः वादन, पृथ्वी से ऊपर अवकाश में छाया पुरुष का विचरण एवं सेट्ठिपुत्र में विलय, मदनंदिनी का प्राणाकर्षण आदि घटनाएं अपनी अस्वाभाविकता एवं विचित्रता के कारण आज के बुद्धिवादी पाठक के लिये सहज ग्राह्य नहीं हो सकतीं । इन्हीं घटनाओं के कारण प्रस्तुत उपन्यास में कुछ जासूसी उपन्यासों का सा पुट आ गया है, जो एक ऐतिहासिक उपन्यास के गौरव के योग्य नहीं है ।

चतुरसेन शास्त्री की द्वितीय कृति सोमनाथ में " वैशाली की नगरवधू " के उपरिनिर्दिष्ट वस्तु और शिल्प गत दोषों का प्रायः अभाव है । इसमें प्रस्तुत महमूद गजनवी का भारत के सोमनाथ पर आक्रमण एवं गुजरात के राजा भीमदेव द्वारा उसका प्रतिरोध पूर्णतया ऐतिहासिक है ।[1] शेष घटनाएं ऐतिहासिक सम्भाव्यता एवं कल्पना पर आश्रित हैं ।

लेखक ने कथावस्तु को " पूर्व निरीक्षण ", " अभियान " और " वापसी " तीन भागों में प्रस्तुत कर महमूद के चरित्र में मानव तत्त्व का निरूपण करने के लिये स उसके साथ देवास्वामी और शोभना की प्रासंगिक कथा का सुष्ठु संयोजन किया है । उपन्यास के आरंभ में " निर्माल्य " प्रकरण से

हल्ल, वेहल्ल, अभय, नन्दीसेन, और मेघकुमार । पहले तीन चेल्लना के पुत्र थे और चौथा एक लिच्छवी गणिका आम्रपाली का पुत्र था । "

1 (i) श्री क० मा० मुंशी : ग्लोरी दैट वान गुर्जर देश, पृ० १५७-२१९
(ii) डा० आर० के० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० १०९-११०

ही साधु-वेशधारी यवनों में से एक के द्वारा निर्माल्य के रूप में लाई हुई रूपसी बाला के अवलोकन पर स्वर्ण मुद्राओं की थैली फेंकते हुए - " बेच दो वह माल यार " कथन पाठक के मन में उनके प्रति सहज ही कुतूहल उत्पन्न कर देता है, जो उपन्यास में भैरवी चक्र, अघोरक्रम, अघोर सम्पदा, षड्यंत्र, आदि प्रकरणों में उत्तरोत्तर पाठक को मुग्ध किये रहता है। इसके साथ ही कथावस्तु में ऐसी कतिपय घटनाओं और प्रसंगों का भी आयोजन है जो पाठकों पर अपना अक्षुण्ण प्रभाव छोड़ जाती हैं। घोषाबापा, केसरिया बाना, धर्मगजदेव, पुष्कर का युद्ध, पुरस्कार, पतिव्रता रमा, आदि प्रकरण यहां उल्लेखनीय हैं। लेखक ने प्रायः सभी घटनाओं को सुशृंखलित रूप में प्रस्तुत किया है, किन्तु कथानक के सहज प्रवाह एवं सुगठितता की दृष्टि से इसमें लेखक की इतिहास प्रस्तुत करने की वृत्ति कुछ बाधक बनी है। इसके निवारण से उपन्यास और भी रोचक एवं रंजनात्मक बनाया जा सकता था।

" चीवर " की कथावस्तु सम्राट् हर्षवर्धन और उसकी बहिन राज्यश्री के ऐतिहासिक व्यक्तित्व पर आधारित है। मालवराज देवगुप्त द्वारा गृहवर्मा का वध कर राज्यश्री को बंदिनी बनाना, हूण-विजयकर लौट आनेवाले राज्यवर्धन का देवगुप्त को युद्ध में मारना किन्तु गौडीय शशांक द्वारा उसका वध किया जाना, इससे विक्षुब्ध हर्षवर्धन द्वारा शशांक को खदेड़ कान्यकुब्ज पर अधिकार कर विंध्याटवी से चितारोहण को प्रस्तुत राजश्री को स्थाण्वीश्वर लिवा लाना और उत्तरापथ में अपना साम्राज्य स्थापित करना, राज्यश्री का लोक कल्याण, बौद्ध धर्म और विद्या के प्रचार-प्रसार एवं दान के लिये राज्य का सर्वस्व उत्सर्ग करना, हर्ष द्वारा पुलकेशिन से युद्ध और संधि एवं मोक्ष परिषद् में समस्त राज्यकोष और निजी वस्त्राभूषणों का दान कर चीवर ग्रहण करना प्रस्तुत उपन्यास की आधिकारिक कथावस्तु है।

उपन्यास के आरंभ में " वर्षोत्सव " तक राज्यश्री और

गृहवर्मा के पारस्परिक अनुराग और आकर्षण, राज्यश्री का मितकाली की सहायता से पलायन, हर्ष की प्रजावत्सलता, चयनिका द्वारा हर्ष को नारी के प्रति आकर्षित करने के प्रयत्न, कादम्बरी-श्रवण के पश्चात् राज्यश्री का अन्तर्द्वन्द्व, राज्यश्री और बाणभट्ट द्वारा पुलकेशिन के साथ सम्राट् हर्ष की शांति-संधि आदि लेखक की कल्पना पर आश्रित हैं। शेष तथ्य, प्रसिद्ध इतिहास ग्रन्थ, बाण के हर्ष चरित एवं ~~युआन~~ युआन च्वांग के यात्रा वर्णन पर आधारित हैं।

प्रस्तुत उपन्यास के शुष्क कथावस्तु को रोचक एवं रसान्वित बनाने के लिये लेखक ने अपनी कल्पना के सहारे कतिपय प्रसंगों, दृश्यों और पात्रों का सर्जन किया है। कथावस्तु सुगठित एवं शृंखलाबद्ध है, किन्तु कुतूहल तत्त्व का निर्वाह बहुत ही सूक्ष्म रूप में दृष्टिगत होता है। लेखक ने उपन्यास में कतिपय पात्रों और प्रसंगों का आयोजन अपने प्रगतिवादी सिद्धान्तों की दृष्टि से भी किया है। देवगुप्त और अरुणाश्व अर्जुन जैसे सामंती प्रथा के प्रतिनिधि और उनकी वृत्तियों के साथ भंड, पद्मा, मदनिका, मितकाली, प्रियंवदा एवं मागधी आदि सामान्य पात्र और उनके जीवन के विविध चित्र इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं।

" बाणभट्ट की आत्मकथा " बाण के प्रारंभिक इत्वर जीवन पर आधारित है। बाण भट्ट, अपनी एक समय की नर्तिका निपुणिका के निवेदन पर स्थाण्वीश्वर के छोटे राजकुल से देवपुत्र तिमिर मिलिन्द की राजकुमारी चन्द्रदीधिति को निकाल सुगतभद्र और कृष्णवर्द्धन की सहायता से उसे मगध की ओर ले जाने के लिए प्रयत्न करता है, किन्तु मार्ग में आभीर सामंत ईश्वर सेन के सैनिकों से भयभीत हो भट्टिनी के नदी में कूद पड़ने पर उसकी रक्षार्थ प्रयत्न करते हुए वह भट्टिनी के साथ भद्रेश्वर लौरिक देव के यहाँ पहुंच जाता है। कृष्णवर्द्धन के मैत्री संदेश पर वह पुनः निपुणिका और भट्टिनी के साथ स्थाण्वीश्वर आ जाता है। यही प्रस्तुत उपन्यास की आधिकारिक कथा

है। इसके साथ अघोर भैरव- महामाया, तथा सुचरिता-विरतिवज्र की दो प्रासंगिक कथाएं भी विद्यमान हैं जिनका लक्ष्य तत्कालीन विविध धर्मोपासनाओं की अभिव्यक्ति है। प्रस्तुत उपन्यास में निपुणिका और मदिनी, तथा उपर्युक्त प्रासंगिक कथाएं कल्पनाजन्य हैं, शेष घटनाएं बाण के " हर्ष चरित " एवं हर्ष प्रणीत " रत्नावली " के आधार पर ऐतिहासिक कही जा सकती हैं।[1]

उपन्यास के कथावस्तु को रोचक बनाने के लिये लेखक ने ऐतिहासिक रोमांस का सम्यक् प्रयोग किया है। बाणभट्ट, निपुणिका, और मदिनी चन्द्रदीधिति की प्रणय-त्रिपुटी में इसके मानवीय रूप का बहुत ही उपयुक्त विकास हुआ है। " कथा " में आदि से लेकर अंत तक रोमांश का यह भाव तीनों पात्रों में शरीर में रक्त-प्रवाह की भांति संचरण करता रहता है। सुचरिता और विरतिवज्र में इसकी परिणति आध्यात्मिक रूप में दृष्टिगोचर होती है। उपन्यास की कथावस्तु सर्वथा सुसम्बद्ध एवं सुघटित है। वर्णनात्मकता की प्रवृत्ति के कारण कतिपय स्थलों पर कथाप्रवाह में गत्यवरोध एवं शिथिलता भी दिखाई देती है।

श्री प्रताप नारायण श्री वास्तव का " बेक्सी का मजार " भारत के अंतिम बादशाह बहादुरशाह के नाम पर भारत वर्ष में व्याप्त स्वाधीनता प्राप्ति के लिये किये गये संघर्ष की गाथा है। १८ अप्रैल १८५६ को बेगम हजरत महल के यहां हुई युद्ध-परिषद में २१ मई १८५६ देश व्यापी विद्रोह की तारीख निश्चित की गई थी, किन्तु मेरठ के सिपाहियों की अधीरता के कारण इसका समय से पूर्व आरम्भ स्वातंत्र्य-संग्राम के सेनानियों में अपेक्षित अनुशासन और युद्ध-कौशल के अभाव के कारण वह आन्दोलन विफल हो जाता है और उसके निमित्त बहादुर शाह को कम्पनी सरकार न्याय के नाटक द्वारा देश-निष्कासित कर

१ श्री डी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० ५०१-११

रंगून भेज देती है जहां मृत्यु के बाद वह " बेकसी का मजार " के रूप में स्मरणा-वशेष रह जाता है । प्रस्तुत उपन्यास की यह आधिकारिक कथा सर्वथा ऐति-हासिक है । [1]

उपर्युक्त आधिकारिक कथा के साथ शाह हसन अस्करी की शिष्या गुलशन और सूबेदार मेजर माताबदलसिंह, गुलनार और अजीमुल्ला, गुलमुहम्मद उर्फ गुलशन और मैना की प्रासंगिक कथाओं का आयोजन उपन्यास में आद्योपान्त कुतूहल तत्त्व का निर्वाह करते हुए उसे रोचक बनाने में पर्याप्त रूप से सफल रहा है । इन प्रासंगिक कथाओं का सर्जन लेखक की कल्पना सृष्टि है, इनके अतिरिक्त स्वाधीनता संग्राम की आधिकारिक कथा पूर्णतया ऐतिहासिक है । प्रासंगिक कथाओं के अतिरिक्त इस बृहत् उपन्यास के कथावस्तु को मनोरम और जीवन्त बनाने के लिये कई रोचक प्रसंगों की भी अवतारणा की गई है । इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास के कथावस्तु का संयोजन बडे कौशल के साथ किया गया है ।

श्री सत्यकेतु विद्यालंकार का " आचार्य चाणक्य " आचार्य विष्णुगुप्त चाणक्य द्वारा भारत पर सिकन्दर के आक्रमण से उसकी रक्षार्थ देश की शक्तियों को संगठित कर ऐक्य संस्थापन के प्रयत्नों को लेकर लिखा हुआ ऐतिहासिक उपन्यास है । सिकन्दर के भारत आक्रमण पर आम्भी की सहायता से उसका भारत विजयी होकर पंजाब में अपना प्रतिनिधि स्थापित कर लौट जाने की घटना आचार्य विष्णुगुप्त को झकझोर डालती है और वह समस्त देश को एक शक्तिशाली तंत्र के अधीन करने के लिए मगध के सुमाल्य नंद से निवेदन करता

---

१ (i) स्वातंत्र्य-वीर सावरकर : दी इन्डियन वार आफ इन्डिपेन्डेन्स,
(ii) श्री सुंदरलाल, भारत में अंग्रेजी राज, द्वितीय खण्ड, पृ० ४०४-७२
(iii) डा० ईश्वरी प्रसाद, भारत का इतिहास, भाग-२, पृ० ३९१-४२१
(i) मेजर बी० डी० बसु, दी राइज आफ क्रिश्चियन पावर इन इन्डिया, पृ० ९५२-६२

है, किन्तु विलासी नन्द से निराश होकर वह अपने शिष्य चन्द्र गुप्त के सहयोग से सिकन्दर के प्रतिनिधि का हनन कर कैकयराज, मालव, गांधार आदि राज्यों की सेना द्वारा मगध पर आक्रमण कर और उसे परास्त कर भारत में अपेक्षित साम्राज्य की स्थापना करता है। उपन्यास अधिकांशतः ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित है।[1] लेखक स्वयं प्राचीन भारतीय इतिहास के विशेषज्ञ हैं, और उन्होंने उपन्यास के प्रस्तावनात्मक लेख में लिखा है — " मेरा कथानक ऐतिहासिक तथ्य से अधिक दूर नहीं है। "[2] उपन्यास के कथावस्तु के संघटन में लेखक ने घटनाओं को सुगठित रूप में प्रस्तुत कर आद्योपान्त कुतूहल के निर्वाह के साथ अपने कलात्मक कौशल का सुन्दर परिचय दिया है।

" दिग्विजय " जगद् गुरु शंकराचार्य के सांस्कृतिक एकता के महत्कार्य को लेकर लिखा गया ऐतिहासिक उपन्यास है। जगद् गुरु शंकराचार्य ने समस्त भारत की यात्रा कर कुमारिल भट्ट के शिष्य प्रभाकराचार्य, मंडनमिश्र जैसे पण्डितों से शास्त्रार्थ कर तत्युगीन रूढ़िवादिता समाप्त की और सांस्कृतिक एकता की स्थापना के हेतु भारत की चारों दिशाओं में पर्यटन कर अपने सिद्धान्तों की विजय की। उपन्यास के लेखक श्री गुरुदत्त की हिन्दू संस्कृति विषयक मान्यताओं का प्रतिफलन इसमें सम्यक् रूप से हुआ है।[3] संस्कृत में लिखे शंकराचार्य के विविध भाष्य एवं स्तोत्र साहित्य तथा मठों के अस्तित्व से प्रस्तुत कथावस्तु की ऐतिहासिकता सुविदित है। तत्युगीन पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में लेखक ने जगद् गुरु शंकराचार्य के जीवन के विविध पक्षों को कलात्मकता के साथ प्रस्तुत कर एक रोचक उपन्यास की सृष्टि की है। उपन्यास में प्रस्तुत अंदल-नीलाम्बरा, विरोचन-मायाविनी, तथा गोविन्द-रुक्मणी और नीलमणि की

१ श्री वी० डी० महाजन, प्राचीन भारत का इतिहास, पृ० २२८-२८

२ आचार्य चाणक्य, परिचय, पृ० ९

३ विस्तृत विवरण के लिये द्रष्टव्य, श्री गुरुदत्त, क्लचरल स्टेट इन भारत वर्ष, अध्याय ७ से ९

प्रासंगिक प्रणयकथाओं द्वारा कुतूहल-तत्त्व का आद्योपान्त निर्वाह कर लेखक ने अपने कथावस्तु के संघटन-कौशल का भी सुन्दर परिचय दिया है ।

" पुष्यमित्र " प्रयोग कालीन ऐतिहासिक उपन्यासों की एक प्रतिनिधि कृति है । शुंग साम्राज्य के संस्थापक पुष्यमित्र शुंग के ऐतिहासिक व्यक्तित्व पर लिखा मिश्रबंधुओं का यह सफल ऐतिहासिक उपन्यास है । इसमें पुष्यमित्र के तक्षशिला, बल्ख, शाम, मक्दूनिया, एथेन्स और कलिंग में शिक्षा। प्राप्ति के पश्चात् मगध के साम्राज्य के महासेनापति के रूप में सेवा, सैन्य-सुधार, एवं यवनों के आक्रमण पर देश में व्याप्त अव्यवस्था को नियंत्रित करने के लिये सम्राट् बृहद्रथ का वध कर साम्राज्य की सत्ता हस्तगत करना और अन्ततः अश्वमेध यज्ञ कर शुंग साम्राज्य स्थापित करना इसकी आधिकारिक कथा है । इसके साथ घनमूर्ति और इथ्यूना एवं पुष्य मंजरी तथा अपोलोडाटस् की प्रणय कथाएं प्रासंगिक कथा के रूप में विद्यमान हैं । पुष्यमित्र का विदेश में समर शास्त्र और शस्त्रास्त्र की शिक्षा-प्राप्ति के हेतु पर्यटन, बल्ख के शहेन्शाह डिमिट्रियस की शाहजादी हेलन के साथ उसका प्रेम और विवाह, तथा पुष्यमित्र की पुत्री पुष्य मंजरी का शाम के वली अहेद शाहजादे अपोलोडोटस् के साथ प्रेम और विवाह आदि घटनाएं सर्वथा काल्पनिक हैं, जिनकी स्वीकृति विद्वान् लेखकों ने उपन्यास की भूमिका में व्यक्त की है । [1]

कथावस्तु को प्रस्तुत करने में लेखक ने इतिवृत्तात्मक शैली के साथ नाट्यात्मक शैली का प्रचुर प्रयोग किया है । अद्भुत कल्पनाश्रित घटनाओं द्वारा ही उपन्यास में रोचकता की सृष्टि हो पायी है । कृति में पाठक की सहज रुचि को उत्तेजित करने के लिए आवश्यक कुतूहल का यहां सर्वथा अभाव है । संवादों की प्रचुरता कथा-प्रवाह में गत्यवरोध और शिथिलता का भी कारण

१ श्री मिश्रबंधु, पुष्यमित्र, पृ० ७-८

बनती है ।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त उपन्यासों के कथावस्तु का अध्ययन करने से यह व्यक्त है कि इनकी रचना के मूल में लेखकों के निजी दृष्टिकोण क्रियाशील रहे हैं । उन्हें निम्नांकित रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है । १ सांस्कृतिक दृष्टिकोण, (२) सैद्धान्तिक प्रतिपादन सम्बन्धी दृष्टिकोण एवं (३) ऐतिहासिक दृष्टिकोण ।

सांस्कृतिक दृष्टिकोण-प्रधान उपन्यासों में लेखक ने सम्बद्ध इतिहास के सांस्कृतिक पक्ष को अपनी रचनाओं का आधार बनाया है एवं उसी के अनुरूप कल्पना के सहयोग से कथावस्तु को संघटित किया है । "बाण भट्ट की आत्मकथा " और " दिग्विजय " इसी कोटि के उपन्यास हैं । सैद्धान्तिक प्रतिपादन की दृष्टि से लिखे उपन्यासों में लेखक विख्यात इतिहास में से अपने सिद्धान्तों के अनुरूप प्राप्य अंश को ग्रहण कर शेष की सृष्टि अपनी कल्पना के सहारे करता है । अपने कल्पित अंश को वह इतिहास के रंग में रंगने का प्रयास तो करता है, किन्तु उसकी वास्तविकता प्रकट हुए बिना नहीं रहती । " सिंह सेनापति " में देवजाति का चित्रण एक साम्यवादी प्रदेश का चित्र प्रस्तुत करता है, जो इतिहास से सुसंगत नहीं लगता । रांगेय राघव का चीवर भी इसी कोटि का उपन्यास है ।

शेष उपन्यास ऐतिहासिक दृष्टिकोण से लिखे गये हैं । इनमें कल्पना का प्रयोग ऐतिहासिक संभाव्यता के अनुरूप किया गया है । केवल आ० चतुरसेन शास्त्री के दोनों उपन्यासों में लेखक ने रस-सृष्टि के लिए उनकी प्रासंगिक कथाओं में इतिहास के कुछएक तथ्यों के साथ स्वच्छंदता का प्रयोग किया है ।

कथानक के गठन में शिल्प के दृष्टिकोण से विचार करने पर " सिंह सेनापति ", " वैशाली की नगरवधू " तथा " पुष्यमित्र " को छोडकर शेष उपन्यासों का कथानक सुगठित, रोचक एवं सरसता से युक्त है । इन उपन्यासों में पाठक की सहज रुचि को संचरणशील बनाने वाले कौतूहल का भी यथावश्यक समावेश दिखाई पडता है । तीसरे, मुख्य कथाएं प्रायः ऐतिहासिक और प्रासंगिक कथाएं प्रायः कल्पनाश्रित हैं । रोमांस का सानुपातिक समावेश भी इनकी चौथी विशेषता है । अतः इस कोटि के उपन्यास प्रायः सफल समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास कहे जा सकते हैं । किन्तु उपर्युक्त तीनों उपन्यासों की स्थिति इनसे भिन्न है । " सिंह सेनापति " का अल्प कथानक अवान्तर बातचीत द्वारा विस्तृत किया गया है । " वैशाली की नगरवधू " का कथानक शिथिल होने के साथ साथ घटनाओं की अस्वाभाविकता तथा अविश्वसनीयता के दोषों से युक्त हैं । यही बात यत्किंचित् रूप में " पुष्यमित्र " के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है ।

गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों की कथावस्तु :

आरम्भ में दी गई सूची से प्रकट है कि गुजराती में समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों के लेखक गुजराती कथा साहित्य के प्रायः गण्यमान्य रचनाकार रहे हैं । अतः यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि इस कोटि के गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यास गुणवत्ता की दृष्टि से उच्च कोटि की प्रतिभा एवं साहित्य साधना का प्रतिनिधित्व करते हैं । यहां इन रचनाओं की कथावस्तु की ऐतिहासिकता तथा उसकी औपन्यासिक कला के, अनुरूप उनके संगठन का विचार किया जा रहा है ।

" गुजरातनो नाथ " श्री मुंशीजी का समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास । यह सोलंकी वंश के प्रतापी राजा सिद्धराज जयसिंह सोलंकी से

सम्बद्ध है। श्री मुंशी ने अपनी " पाटणनी प्रभुता " " गुजरातनो नाथ " और " राजाधिराज " नामक उपन्यास त्रयी में जयसिंह देव के समस्त जीवन को आवृत किया है। " गुजरातनो नाथ " इन तीनों में से श्रेष्ठ कृति है। इसमें श्री मुंशीजी ने मूल कथावस्तु और उसके पात्रों के साथ संभाव्यता के आधार पर कतिपय घटनाओं और पात्रों की भी कल्पना के सहारे सृष्टि की है। उन्होंने प्रस्तावना में ही स्पष्ट कर दिया है कि " अनेक ऐतिहासिक प्रसंगों और कथाओं का संकलन करके ही यह कथा (वार्ता) लिखी गई है और ऐतिहासिक तत्त्व यथाशक्य अपनी यथावत् अवस्था में ही रखे गये हैं। [1] श्री मुंशी जी का यह कथन एक ओर जहां उनके ऐतिहासिक तत्त्वों के प्रति जागरूकता को व्यक्त करता है, वहां प्रस्तुत उपन्यास में यथावश्यक कल्पना के उपयोग को भी ध्वनित किये बिना नहीं रहता।

इसकी प्रमुख घटनाएं राजमाता मीनलदेवी का द्वारका की यात्रा पर जाना, मालव का गुजरात पर आक्रमण, शान्तु मेहता का मालव सेनापति उबक से संधि कर गुजरात की रक्षा करना, दूसरी ओर जूनागढ के रा' नवघण का गुजरात पर आक्रमण के लिए ससैन्य चढ आना और पराजित होना, देवचन्द्र सूरि द्वारा हेमचन्द्र की दीक्षा, खंभात में खतीब पर किया गया अत्याचार, और जयसिंह देव से उसे प्राप्त न्याय, खेंगार द्वारा ली हुई चार प्रतिज्ञाएं एवं उनका पालन और राणक का अपहरण आदि इतिहास सम्मत हैं। [2] इनके अतिरिक्त काक का खंभात प्रयाण, श्रावक मंत्री उदयन के चंगुल से मंजरी का उद्धार, और उसके साथ परिणय, कीर्तिदेव का उबक के साथ पाटण आगमन, अखंड आर्यावर्त की स्थिति के लिए पाटण में गुप्त आंदोलन,

१ श्री क० मा० मुंशी, गुजरातनो नाथ, प्रस्तावना

२ (I) श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, पृ० १००-१२
(II) डा० आर० के० धारेया, गुजरातनो इतिहास, १२१-१२४

पितृकुलाभिज्ञान आदि घटनाएं लेखक की कल्पना सृष्टि है । अतः प्रस्तुत उपन्यास में नियोजित इतिहास और कल्पना का यह समन्वय उपयुक्त कहा जा सकता है ।

कथावस्तु के संयोजन में लेखक ने औपन्यासिक शिल्प को प्रमाणित कर दिया है । एक ओर पाटण की कथा चलती है, तो दूसरी ओर से उससे कदम मिलाते हुए काक-मंजरी की । घटना-विन्यास सुगठित और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को लिये हुए है । कथा की रोचकता के लिए इसमें राजनीतिक संघर्षों के बीच प्रणय-प्रसंगों की निर्मल स्रोतस्विनी प्रवहमान है । मुंजाल और मीनल का प्रेम आत्मपरिष्कृति की सीमाओं को स्पर्श करता है और दूसरी ओर कश्मीरादेवी का दंडनायक मंडलेश्वर त्रिभुवनपाल के लिये प्रेम उदात्तता और कायिक भूमिका को लिए हुए है । काक-मंजरी तथा अन्य भी प्रेम कथाओं में प्रेम की शक्ति के महत्त्व का प्रतिपादन उसे विधायिका शक्ति के रूप में रखते हुए किया गया है ।[1]

" गुजरातनो नाथ " की कथावस्तु की अन्य उल्लेख योग्य विशेषता अन्तर्द्वन्द्व और कुतूहल के सुन्दर निर्वाह की है, ~~जिसमें~~ जिससे उसमें पाठक की आद्योपान्त तल्लीनता बनी रहती है । कथा के आरम्भ में ही काक का महामात्य मुंजाल और जयसिंह देव को भ्रमवश उनक सेनापति और नरवर्मा मान लेना, काक को पराक्रम के लिए प्रेरित करनेवाली परिस्थितियाँ, किन्तु मंजरी के दृष्टिकोण से उत्पन्न मानसिक द्वन्द्व, तथा कीर्तिदेव-मुंजाल और सोम-कृष्णदेव के अन्तर्द्वन्द्व इसके उदाहरण हैं । ये उपर्युक्त गुणवत्ता के साथ साथ कौतूहल और रोचकता भी बनाये रहते हैं । कौतूहल की स्थिति को बनाये

१ मुंशी हिज आर्ट एन्ड वर्क : वाल्यूम ।।।, पृ० २९

रखने में मुंशीजी का शिल्प प्रशंसनीय है ।

" जय सोमनाथ " गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों में से मुंशीजी की दूसरी महत्त्वपूर्ण कृति है । इसकी कथावस्तु पूर्व निर्दिष्ट सोमनाथ (आचार्य चतुर सेन कृत) की ही भांति महमूद गजनवी के आक्रमण से सम्बन्धित है, किन्तु ऐतिहासिक विश्वसनीयता और कला के संयोजन के दृष्टिकोण से यह पूर्व विवेचित उपन्यास की तुलना में अधिक सफल कृति है ।

भीमदेव का सोमनाथ की रक्षा में संघर्ष, मंदिर का विध्वंस, भीमदेव और चौला का संभात प्रयाण, अन्य राजाओं और उसकी सेना द्वारा लौटती हुई यवन सेना का हनन और उसका पलायन तथा भीमदेव द्वारा प्रभास में पुनः मंदिर का निर्माण, करवाना आदि घटनाएं इतिहास सम्मत हैं ।[1] किन्तु भीमदेव द्वारा कंक की हत्या और त्रिपुर सुंदरी की पूजा जैसी घटनाएं पाशुपत संप्रदाय की तत्कालीन कौल-कापालिक शाखाओं की पूजा-विधियों की बीभत्सता को स निर्दिष्ट करने के लिए कल्पना द्वारा प्रस्तुत की गई हैं, फिर भी ये इतिहाससम्मत ही हैं । इसी प्रकार भीमदेव का चौला देवी को रानी बनाना और उससे पुत्र-प्राप्ति कुमारपाल प्रबंध से अनुमोदित है ।[2] चौला की मृत्यु के निरूपण में लेखक की निरंकुश कल्पना दृष्टिगोचर होती है ।

जैसा कि उपर्युक्त विवरण से प्रकट है कि इसकी कथावस्तु आकर्षक और राजनीतिक एवं सांस्कृतिक वातावरण को लिए हुए चलती है ।

१ श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, २५७-२६९

२ (I) मेरु तुंग सूरी कृत प्रबंध चिंतामणि, पृ० १३४

(II) डा० आर० के० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० ११२

वह निश्चय ही सुगठित एवं मनोरम है और उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में हिन्दी के " स्व सोमनाथ " शीर्षक उपन्यास की तुलना में यह अधिक सशक्त रचना कही जा सकती है ।

" पृथ्वी वल्लभ " उपन्यास मोज से पूर्व परमार वंशीय साम्राज्य के संस्थापक अद्भुत पराक्रमी एवं काव्य रसिक मुंज के आकर्षक व्यक्तित्व द्वारा कठोर वैराग्य से जीवन को शुष्क एवं नीरस बना देने वाली मृणाल के अन्तःकरण को कालान्तर में स्वभावतः प्रणय रस से आर्द्र कर देने की घटना से सम्बन्धित है । अवन्तीराज मुंज की मान्य खेट के सम्राट तैलप पर अनेक बार विजय, किन्तु अंतिम युद्ध में पृथ्वी वल्लभ मुंज की पराजय, बंदी बने हुए मुंज को तैलप द्वारा यातनाएं, जीवन के समर्थ भोक्ता मुंज के प्रति तपस्विनी मृणाल का समर्पण, भिल्लम का विद्रोह और स्थान देश को प्रस्थान और अंत में तैलप द्वारा हाथी से मुंज को कुचला कर वध, आदि मुख्य घटनाएं इतिहासानुमोदित हैं ।[1] इसके प्रायः सभी पात्र भी ऐतिहासिक हैं । मुंज के प्रतापी व्यक्तित्व का जनमानस और मृणाल पर प्रभाव एक प्रभावशाली वातावरण प्रस्तुत कर देता है । विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि लेखक ने इस उपन्यास पर इतिहास को कहीं भी हावी नहीं होने दिया है । इतिहास की सीमा में रहकर भी कथावस्तु कहीं भी बोझिल नहीं हुई है, प्रत्युत उसमें कलात्मकता द्वारा अद्भुत कथा-रस की सृष्टि हुई है ।

दूसरी उल्लेखनीय विशेषता यह है कि घटनाओं के संयोजन में

---

1 (i) मेरु तुंग सूरी कृत, प्रबंध चिंतामणि, पृ० ३०-३७

(ii) श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, पृ० १५९-६१

लेखक ने विश्वसनीयता एवं स्वाभाविकता की सृष्टि की है । उनके बीच-बीच जिज्ञासा का ज्वार उठता है और आगे चलकर पाठक को तृप्त करके भाव तरंगों को उठाता जाता है । तीसरे, कथानक को और भी मनोरम बनाने के लिये लेखक ने विलासवती और रसनिधि की प्रणय-कथा की योजना की है । अतः निष्कर्ष रूप में इतिहास और कल्पना के सफल समन्वय की यह अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण कृति बन गया है ।

" नीलकंठनुं बाण " श्री चुनीलाल वर्धमान शाह का एक श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास है जो चामुंडराज के उत्तरकालीन जीवन से सम्बन्धित है । इसमें महारानी पल्लवी देवी के निधनोपरान्त चामुंडराज के व्यक्तित्व का निरूपण है । मालव की नर्तिका द्वारा नीलकण्ठ की चोरी और उसके परिणाम स्वरूप उपन्यास की अंतिम घटना का घटित होना पाठक के मन पर एक स्थायी प्रभाव छोड जाता है । चामुण्ड का तपस्वी जीवन, उसकी काशी-यात्रा, अवन्तिराज द्वारा राजचिह्नों की चोरी, चामुंड का संन्यास एवं आगे चलकर शुक्लतीर्थ पर समाधि-ग्रहण आदि प्रमुख घटनाएं इतिहास सम्मत हैं ।[1] इसके पात्र भी प्रायः ऐतिहासिक हैं । केवल एक दो नामों के सम्बन्ध में मतभेद का स्पष्टीकरण लेखक ने स्वयं प्रस्तावना में कर दिया है । उज्जैनी की नर्तकी का पात्र और उससे सम्बन्धित घटनाएं कल्पनाश्रित हैं किन्तु ऐतिहासिकता की अवस्था के साथ उनकी संगति बैठ जाती है ।

उपन्यास की आधिकारिक कथा चामुंड के तपस्वी जीवन के मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को प्रस्तुत करती है । अतः उसमें जिज्ञासा और कौतूहल का समावेश स्वाभाविक रूप से हुआ है । उसके विलासी संस्कार संन्यस्त अवस्था में

१ गुजरातनो इतिहास, गुजरात विद्यासभा, पृ० १४८

भी बीच-बीच में जग उठते हैं। अतः मोह और वैराग्य के द्वन्द्व द्वारा कथावस्तु सर्वत्र रोचक एवं कौतूहल से परिपूर्ण दृष्टि गोचर होती है। मल्लिका के प्रति उसका मोह समाधि-ग्रहण तक बना रहता है। इस प्रकार विषय-वस्तु की प्रस्तुति में उपन्यासकार सफल कहा जा सकता है।

" चौलादेवी " ग्यारहवीं शती के द्वितीय चरण की कथा पर आधारित गुजराती का एक लोकप्रिय उपन्यास है। इसके लेखक धूमकेतु ने सोमनाथ के मन्दिर की नृत्यांगना चौलादेवी को गुजरात के राजा भीमदेव द्वारा रानी के रूप में स्वीकार करने की मुख्य घटना को इसका आधार बनाया है। पूर्व विवेचित दो अन्य ऐतिहासिक उपन्यासों में भी इस घटना को लिया गया है और हम यह लक्ष्य कर चुके हैं कि यह घटना इतिहास सम्मत है। सेनापति बालुकराय, सिंहनाद, जयदेव, प्रतापदेवी, मम्मांक देव, आदि पात्र कल्पना सृष्टि की देन हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि इतिहास और कल्पना के समन्वय द्वारा इसमें रोचकता एवं कौतूहल की सृष्टि की गई है। उपन्यास का अंतिम प्रसंग तो और भी हृदय स्पर्शी और इतना अद्भुत है कि पाठक सोचता ही रह जाता है। यही इसकी कथावस्तु की प्रभविष्णुता का रहस्य भी है।

" राज संन्यासी " उपन्यास में भी धूमकेतु ने पूर्वनिर्दिष्ट " चौलादेवी " के कथानक को अग्रसर किया है। इसके मुख्य पात्र भी चौला देवी के ही हैं। इसमें मंत्रीश्वर, दामोदर मेहता, अर्बुदपति धंधूकराज को घेर कर पाटण का मंडलेश्वर बना लेता है। आगे चलकर इसकी कथा सिंध के सुल्तान हम्मक पर भीमदेव की विजय, चित्तौड़ में भोजराज की विद्यासभा में चौला द्वारा गुजरात के गौरव और पाटण की प्रतिष्ठा की रक्षा एवं भीमदेव और भोजराज के द्वन्द्व की ओर अग्रसर होती हुई मंत्रीश्वर दामोदर के संन्यास ग्रहण में परिणत होती है। आवश्यकतानुसार मनोहा, जयदेव, सोमनाथ के रक्षकका

पुत्र आदि काल्पनिक पात्रों की सृष्टि की गयी है । इस उपन्यास की आधिकारिक कथा के साथ प्रासंगिक कथाएं संगुम्फित रूप में नियोजित हुई हैं । बीच-बीच में मार्मिक प्रसंगों की योजना भी की गई है । उन्मत्त हाथी को शीघ्र शान्त करने के लिये चौलादेवी का मृदंग-वादन, भोज की विद्यासभा में सभा की समस्याओं और दीपक राग की चुनौति का मल्हार राग से प्रतिकार, भीमदेव की रक्षा में सोमनाथ के रक्षक के पुत्र का बलिदान आदि घटनाएं मार्मिक हैं जो पाठक पर गहरी छाप छोडती हैं । विशेषकर चौलादेवी के अपूर्व त्याग से प्रजा के विस्मय-विमुग्ध होने की अंतिम घटना अक्षुण्ण प्रभाव डालती है । अतः प्रभाव पूर्ण भंकृति से समाप्त होने वाला यह उपन्यास रोमांच और युद्धों के दृश्यों से गुम्फित कथावस्तु को मनोरम रूप में प्रस्तुत करता है ।

गुणवंतराय आचार्य द्वारा लिखित " देश दीवान " शीर्षक उपन्यास अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के गुजरात के इतिहास से सम्बद्ध कथा को लेकर प्रस्तुत हुआ है । विशेष उल्लेखनीय यह है कि यह युगानुरूप लोकचेतना के सजीव चित्रों से भरा पूरा है । अतः पाठक को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में भी ऐतिहासिक घटना के साथ सम्बद्ध कर सकता है । इसकी ऐतिहासिकता के विषय में लेखक ने स्वयं स्वीकार किया है कि मल्हारराव द्वारा अपनी परदेशी अफगान फौजी टुकडी की बरखास्तगी, इस टुकडी का मेरामण द्वारा संस्कार, पोशिता का घेरा, कालू मेर की कथा, जीवूबा का खून, हत्यारे चांद की न्यायिक खोज, उसे सीमा-निष्कासन, जाडेजा की एकता, चांद गोरी की विजय, ये सभी इतिहास द्वारा प्रमाणित हैं और शेष मेरामण वजीर की जीवन कथा लोक-कथाओं पर आश्रित हैं । इसी प्रकार कोतवाल जीवसेता, बक्षी, जगजीवन मेहता, सेनापति चत्रभुज दोशी, प्रभाशंकर वसावडा, अमराम पंड्या, वाघजी वोरा, घेला सेठ आदि सहायक पात्र कल्पनाश्रित हैं, जिनकी सृष्टि लेखक के प्रसंग विशेष की

आवश्यकता को लक्ष्य में रख कर की गई है ।

इसकी कथावस्तु रोचक एवं आकर्षक है । सुशृंखलता के कारण अपेक्षित गतिशीलता भी उसमें वर्तमान है । तीसरे, रोचकता एवं कौतूहल का प्रायः सर्वत्र निर्वाह हुआ है । विशेष उल्लेखनीय यह है इसमें लोकजीवन का संस्पर्श पूर्ववर्ती कृतियों की अपेक्षाकृत अधिक है ।

श्री चुनीलाल मडिया कृत " कुमकुम अने आशका " उपन्यास भी पूर्ववर्ती " जय सोमनाथ " की भाँति ही महमूद गजनवी के आक्रमण की घटना पर आधारित है किन्तु श्री मडिया ने अपनी सप्तरंगी कल्पना द्वारा इसे रंजित करके एक नया ही रूप प्रदान किया है । भीमदेव और महमूद का संघर्ष और आगे चलकर महमूद की वापसी की घटना इतिहास-विश्रुत हैं । किन्तु आक्रमण से पूर्व भीमदेव और बहुला का प्रणय, विघ्नों के बावजूद भी उसकी स्वीकृति, " नूरे चश्म " पर महमूद की काष्ट कंदुक (पोलो खेल) क्रीडा मैंहदी बेगम का उसे आक्रमण से विरत करने का प्रयास, तथा भीमदेव को न मारने का वचन, सोमनाथ के पतन के पश्चात् बहुला की समाधि, आदि घटनाएं कल्पना-प्रसूत हैं जिन्हें लेखक ने संभवतः उपर्युक्त उद्देश्य से सम्गुम्फित किया है । इसी प्रकार पात्रों की सृष्टि में भी कल्पना का आधार लिया गया है । श्री मडिया ने महमूद के इतिहास-विश्रुत क्रूर स्वभाव को मैंहदी बेगम की कथा के प्रवेश द्वारा भिन्न रूप में रखने का यत्न किया है ।

इस उपन्यास की सब से उल्लेखनीय विशेषता वर्णित ऐतिहासिक प्रसंग को अधिक रोचक एवं मनोरम बनाने की है । इसके लिए लेखक ने कतिपय नये प्रसंगों की अवतारणा की है, ये प्रसंग संक्षेप में इस प्रकार — सुभट विहार द्वारा आयोजित धनुर्विद्या की प्रतियोगिता, भीमदेव का प्रतिस्पर्द्धी के रूप में आना, लक्ष्यवेध का प्रसंग, युक्ती के प्रतिस्पर्द्धा में भाग लेने की अपात्रता

की घोषणा, सोमनाथ की नृत्यार्चना का दृश्य आदि । इसके अतिरिक्त मर्म-स्पर्शी और प्रभावशाली दृश्यों की योजना में लेखक की दृष्टि बडी कुशल और मर्मान्वेषी है । सिन्ध के मार्ग में भीमदेव का महमूद पर आक्रमण, अनुपम शौर्य के बीच में प्रणय की झलक आदि से सम्बद्ध घटनाएं भी यहां विद्यमान हैं ।

" रा गंगाजलियो " जूनागढ के अंतिम चूडासमा राजा मांडलिक के पतन और गुजरात के सुलतान महमूद बेगडा के अभ्युदय काल को लेकर लिखा हुआ ऐतिहासिक उपन्यास है । मांडलिक का गंगाजल से स्नान के प्रभाव से ऊना के वाजा के कोढ का निवारण करना, संतान का अभाव, उसकी साध्वी रानी कुंतादे द्वारा उसका द्वितीय विवाह, विलासी वृत्ति के कारण उसका अपने मंत्री बीशल की पत्नी के साथ व्यभिचार, एवं चारण मित्र की पत्नी के प्रति उसका कलुषित विचार, परिणामतः महमूद बेगडा का आक्रमण और उसमें मांडलिक की पराजय एवं जीवन के लिए धर्म-परिवर्तन प्रस्तुत उपन्यास की आधिकारिक कथा है । इसके साथ ऊना के बीजल वाजा, आई नागबाई और मुंधारेढ नरसी भक्त और मामी रतनबाई तथा हमीर जी गोहिल के पुत्र मीलकुमार की प्रासंगिक कथाएं भी इसमें विद्यमान हैं । पूर्वावस्था में मांडलिक की विविध विद्याओं में प्रवीणता, उसका पुण्यात्मा और शूरवीर होना, तथा बाद में अपने मंत्री बीशल की पत्नी के साथ उसका अवैध व्यवहार, विलबर फोर्स वेल के हिस्टरी आफ काठियावाड (प्रकरण सात), मिराते सिकन्दरी, सोरठी तवारीख आदि इतिहास ग्रन्थों पर आधारित है ।[1] मांडलिक और महमूद बेगडा का युद्ध सर्वथा इतिहास विश्रुत है ।[2] अन्य प्रासंगिक कथाओं का आधार लोक कथाएं

१ श्री झवेरचंद मेघाणी, रा' गंगाजलियो, प्रस्तावनात्मक निवेदन, पृ० ६

२ डा० आर० के० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० २४१ –४५ ।

हैं, जिन्हें लेखक ने कल्पना के विनियोजन से उपन्यास में सुगुम्फित किया है ।[1]

कथावस्तु के संघटन में लेखक ने आधिकारिक कथा के साथ कतिपय प्रासंगिक कथाओं को सुसम्बद्ध रूप में प्रस्तुत कर उपन्यास में आद्योपान्त कौतूहल का सम्यक् निर्वाह किया है । चारणी की चूंदडी, वीजा का कोढ, मूंथा रेढ को मिली सुंदरी और उसके शरीर पर कपडों का जल जाना, अवसान प्राप्त रतनबाई का नरसैया को पानी पिलाना आदि चमत्कार पूर्ण घटनाएं विस्मय विमुग्ध अवश्य करती हैं, किन्तु अतिप्राकृतिक होने के कारण ऐतिहासिक उपन्यास के योग्य नहीं कही जा सकतीं ।

" विक्रमादित्य हेमू " श्री जय भिक्खु का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक उपन्यास है । हेमू और शेरशाह की आदर्श मैत्री शेरशाह की एक कुशल सुल्तान के रूप में योग्यता, एक जैन और मुसलमान की एकता तथा शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् परिवर्तित परिस्थितियों में श्रावकवीर हेमू का दिल्ली के सिंहासन पर आरूढ होना आदि को लेकर यह उपन्यास लिखा गया है । शेरशाह द्वारा अफगान सल्तनत की स्थापना, कलिंजर-विजय के समय उसके बारूद से जलजाने से उसकी मृत्यु, उसके निधन पर सल्तनत की रक्षा के लिये उसके उत्तराधिकारियों की अयोग्यता, अफगान सल्तनत के मंत्री के रूप में हेमू का अफगान सल्तनत को मुगलों से बचाने के लिए प्रबल प्रयास और अन्ततः दिल्ली के सिंहासन पर विजयी विक्रमादित्य हेमू का आरूढ होना आदि घटनाएं इतिहास सम्मत हैं ।[2]

---

१ (क) श्री झवेरचंद मेघाणी, रा' गंगाजलियो : प्रस्तावनात्मक निवेदन, पृ०७

(ख) श्री मजमूदार, गुजरात साहित्य सभा कार्यवाही, सन् १९२८-२९, पृ० ५७

२ (क) डा० ईश्वरी लाल, भारत का इतिहास, भाग-२, पृ० ५ से ८ और १९ पर

(ख) डा० वी० डी० महाजन, मुस्लिम रूल इन इंडिया, अध्याय ४, पृ० २८-५७ तथा ६६ और ५७

चुनार की मलिका के साथ शेरशाह के प्रणय प्रसंग में लेखक ने उन्मुक्त कल्पना का प्रयोग किया है। उपन्यास में कतिपय स्थानों पर इतिवृत्तात्मकता की अधिकता के कारण कथावस्तु के संघटन में काफी शैथिल्य आ गया है। इससे इन स्थलों पर कृति में कौतूहल और रोचकता की कमी भी खलने लगती है।

गुजराती के प्रयोग कालीन ऐतिहासिक उपन्यासों की प्रतिनिधि रचना " करण घेलो " में गुजरात के अंतिम राजपूत राजा करण द्वारा अपने मंत्री माधव की पत्नी के अपहरण, उससे विक्षुब्ध माधव द्वारा दिल्ली के अलाउद्दीन खिलजी से निवेदन कर गुजरात पर मुसलमान सेना का आक्रमण करवाने, युद्ध में करण की पराजय के उपरान्त उसकी रानी कौला देवी के अपहरण और राजा करण की अज्ञात मृत्यु की कथा आधिकारिक कथा के रूप में है। इसके साथ ही हरपाल उसके आश्रयदाता और शक्ति, एवं राजा करण की पुत्री देवल देवी तथा उसके आश्रयदाता रामदेव के पुत्र शंकर देव की प्रासंगिक प्रणय कथाएं भी विद्यमान हैं, जो कथावस्तु को पर्याप्त रोचकता प्रदान करती हैं। प्रस्तुत उपन्यास में कई स्थलों पर लेखक ने ऐतिहासिक तथ्यों की प्रस्तुति में कई स्थानों पर स्वच्छन्दता का प्रयोग किया है।[1] करण की पराजय के उपरान्त कौला का पुरुषवेष में पलायन और भीलनायक की हत्या, बाबरा और शक्ति के प्रसंगों का आयोजन, देवलदेवी और शंकर का प्रेम, राजाकरण का पराजय के पश्चात् गुप्तवेश में गुजरात में आना, गुजरात से वयस्क अवस्था में देवलदेवी का दिल्ली ले जाया जाना और शाहजादा खिजार खां से उसकी निकाह आदि में लेखक ने अपनी मुक्त कल्पना का प्रयोग किया है। इन प्रसंगों के अतिरिक्त उपन्यास की कथावस्तु इतिहास सम्मत है। उपन्यास में कथावस्तु की घटनाएं सुशृंखलित हैं, किन्तु कई स्थानों पर वर्णन-बाहुल्य के कारण उसमें गत्यवरोध उत्पन्न हो जाता

१ श्री केशवलाल हि० कामदार, " करण घेलोनो ऐतिहासिक संदर्भ लेख, ग्रन्थ, दिसम्बर, १९६६

है और नीरसता उभर आती है ।

उपर्युक्त गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों के कथावस्तु का अध्ययन भी इनके मूल में निहित इनके रचयिताओं के विविध दृष्टिकोण की ओर इंगित करता है, जिन्हें हम निम्नांकित रूप में प्रस्तुत कर सकते हैं

१ सैद्धान्तिक प्रतिपादन सम्बन्धी दृष्टिकोण
२ मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण
३ ऐतिहासिक दृष्टिकोण ।

प्रथम कोटि के उपन्यासों में लेखक अपने सिद्धान्तों के अनुकूल ऐतिहासिक विषय-वस्तु ग्रहण कर पाठकों के सम्मुख अपने सिद्धान्तों का प्रतिपादन करता है । श्री गुणवंतराय आचार्य का " देश दीवान " इसी कोटि का उपन्यास है । इसमें लेखक ने अठारहवीं शताब्दी के द्वितीय चरण में जनवादी दृष्टि से राज्यसत्ता के संचालन की आवश्यकता और लोक-कल्याण के लिये राज्य के अस्तित्व की ओर इंगित कर अपने जनतंत्रात्मक सिद्धान्तों का निरूपण किया है ।

२ मनोविश्लेषणात्मक दृष्टिकोण वाले उपन्यासों में ऐतिहासिक पात्रों के चरित्र का विश्लेषण मानस-शास्त्र के सिद्धान्तों के आधार पर किया जाता है । श्री कन्हैयालाल माणकलाल मुंशी का " पृथिवी वल्लभ " एवं श्री चुनीलाल वर्धमान शाह का " नीलकंठनुं वाण " इस कोटि के उपन्यास हैं । " पृथिवी वल्लभ " में एकान्त रूप से कठोर वैराग्य और तपस्यामय जीवन का अनुसरण करने वाली मृणाल का जीवन के समर्थ भोक्ता मुंज के समक्ष आत्म समर्पण एवं श्री शाह के " नीलकंठनुं वाण " में महारानी पल्लवी के निधनोपरांत तपस्यालीन चामुण्डराय का उज्जैनी की नर्तिका के प्रति अन्तर्निहित आकर्षण की प्रबलता मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुरूप ही है । मनोविज्ञान के अनुसार

मानव की दमित वासनाएं अनुकूल परिस्थितियों में अपनी अभिव्यक्ति के लिये उद्दाम स्वरूप धारण कर लेती हैं। उपर्युक्त दोनों उपन्यासों में इस सिद्धान्त का सम्यक् निरूपण हुआ है।

२ इस वर्ग के शेष उपन्यासों का वस्तु गठन ऐतिहासिक दृष्टि-कोण के आधार पर किया गया है। इनमें पूर्व निर्दिष्टानुसार ऐतिहासिक तथ्यों के साथ कल्पना का प्रयोग इतिहास की संगति के अनुकूल किया जाता है। " गुजरातनो नाथ ", " जय सोमनाथ ", " चौला देवी ", " राज संन्यासी ", " कुम कुम अने आशका ", "रा' गंगाजलियाँ ","विक्रमादित्य हेमू " और " करण घेलो " इसी कोटि के उपन्यास हैं। इनमें से " करण घेलो " और " कुम कुम अने आशका " में लेखक ने अपने लक्ष्य के अनुरूप ऐतिहासिक तथ्यों के साथ स्वच्छंदता का भी प्रयोग किया है।

तुलना और निष्कर्ष :

पूर्ववर्ती पृष्ठों में हिन्दी तथा गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों की कथावस्तु का जो विवेचन किया गया है, उसके आधार पर कतिपय महत्त्वपूर्ण तथ्य प्रकाश में आते हैं, जिन्हें संक्षेप में इस प्रकार रखा जा सकता है :-

(१) इस वर्ग के हिन्दी में लिये गये उपन्यासों का काल फलक विस्तृत है और इतना ही नहीं प्राचीन हिन्दू-काल के कथानक को लेकर लिखे गये उपन्यासों की संख्या अधिक है, जबकि गुजराती में लिखे गये सभी उपन्यास मुस्लिम शासन काल से सम्बद्ध हैं।

(२) कालगत और वस्तुगत साम्य के दृष्टिकोण से एक मात्र महमूद गजनवी के सोमनाथ पर हुए आक्रमण को लेकर लिखे गये उपन्यास हिन्दी और

गुजराती दोनों में मिलते हैं। गुजराती के " जय सोमनाथ " और " कुम कुम अने आशका " में इनका कथावस्तु प्रदेश तक ही सीमित है, जबकि " सोमनाथ " में वह अपेक्षाकृत विस्तृत है।

(३) चरित्र विशेष के विश्लेषण को लेकर कथावस्तु का नियोजन प्रायः गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में अधिक दिखाई देता है। " जय सोमनाथ " और " कुम कुम अने आशका " ही केवल इसके अपवाद हैं। दूसरी ओर हिन्दी में इस कोटि की रचनाएं अपेक्षाकृत कम हैं।

(४) सिद्धान्त-विशेष के प्रतिपादन के मूलवर्ती दृष्टिकोण को लेकर लिखे गये उपन्यास एक प्रकार से अपवाद रूप में ही मिलते हैं। हिन्दी में " सिंह सेनापति " तथा " चीवर " और गुजराती में " देश दीवान " इस कोटि के उपन्यास हैं।

(५) मनोवैज्ञानिक विश्लेषण को लेकर लिखे गये उपन्यास हिन्दी में प्रायः नहीं प्राप्त होते। केवल " वैशाली की नगरवधू " में इसका अच्छा संस्पर्श है, किन्तु गुजराती के " पृथिवी वल्लभ " और " नील कंठनुं आण " इसके उत्तम उदाहरण हैं।

(६) सांस्कृतिक वातावरण के निरूपक उपन्यासों का गुजराती में प्रायः अभाव ही है। " बाणभट्ट की आत्मकथा " तथा " दिग्विजय " इस कोटि के उपन्यासों का सुन्दर साक्ष्य उपस्थित करता है।

हिन्दी में " बेक्सी का मनार " " आचार्य चाणक्य " एवं " दिग्विजय " जैसे उपन्यास राजनीतिक, राष्ट्रीय, तथा सांस्कृतिक एकता के भाव की दृष्टि से राष्ट्रव्यापी महत्त्व के हैं। गुजराती में इस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों के कथानक का क्षेत्र गुजरात प्रदेश तक सीमित होने के

२ कारण " गुजरातनो नाथ ", " राजसंन्यासी " एवं " देश दीवान " में प्रदेश विशेष के गौरव पर ही लेखक का ध्यान केन्द्रित रहा है ।

अतः संक्षेप में कहा जा सकता है कि ऐतिहासिकता एवं कला-संयोजन की दोनों भाषाओं में साहित्य-साधना की निजी परम्पराएं रही हैं । उपन्यासकार का व्यक्तित्व व्यापक होता है । वह किसी एक भाषा और शिल्प-परम्परा की ही देन नहीं होता । अतः इस संदर्भ में हिन्दी और गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों की स्वतंत्र विशेषताओं पर उपर्युक्त निष्कर्षों के अतिरिक्त अधिक कुछ नहीं कहा जा सकता ।

चरित्र-चित्रण :

चरित्र-चित्रण उपन्यास का एक महत्त्वपूर्ण तत्त्व है । प्रायः उपन्यास के पढ लेने पर हम उसके कथानक को भूल सकते हैं, किन्तु उसके विशिष्ट पात्रों को नहीं । उपन्यास की समाप्ति के पश्चात् भी उसके पात्र पाठक के स्मृति पटल पर सहज ही मंडराते रहते हैं । यह स्थिति उपन्यास में प्रभावशाली पात्र सृष्टि के फलस्वरूप ही दृष्टिगत होती है । अतः उपन्यासकार की सफलता इस तथ्य से भी आंकी जाती है कि वह अपने उपन्यास में ऐसे पात्रों की सृष्टि कहां तक प्रस्तुत करता है, जो पाठकों को अपने जीवन के पात्रों के से लगें और वे उनके सुख-दुःख और हर्ष-शोक में उनके साथ संवेदनशीलता अनुभव करने लगें । सामान्य जीवन से सम्बन्ध रखने वाले उपन्यासों में ऐसे पात्रों की सृष्टि में लेखक अपनी सर्जनात्मक कल्पना, अन्वेषण-शक्ति, एवं मानव मनोविज्ञान का यथेष्ट प्रयोग कर सफल हो सकता है, किन्तु ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास-प्रसिद्ध पात्रों की सजीव सृष्टि उपन्यासकार की सर्जनात्मक शक्ति के लिये एक चुनौति है । अन्य उपन्यासकारों की भांति अपने उपन्यास में वह अपने कौशल का उपयोग करने में स्वतंत्र नहीं होता । उसे अपने पात्रों के चरित्र की रूपरेखा सीधी इतिहास

से प्राप्त होती है। इतिहास द्वारा प्रदत्त पात्र की चारित्रिक रूपरेखा की सीमा में रह कर ही उसे अपने कला-कौशल से अपने पात्रों को सजीवता प्रदान करनी पडती है। यदि इसमें वह सफल रहता है, तो वह कृतकार्य है, अन्यथा वह अपने कर्तव्य से च्युत कहा जाता है।

पात्रों के चरित्र-चित्रण के लिये लेखक वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक, एवं नाटकीय पद्धतियों का आश्रय ग्रहण करता है। प्रथम में वह स्वयं पात्रों की बहिरंग एवं अंतरंग विशेषताओं को उद्घाटित करता चलता है। किन्तु पात्रों में सहज-स्वाभाविकता की सृष्टि के लिये कई स्थानों पर वह मनोविश्लेषणात्मक पद्धति को भी अपनाता है। इसके अन्तर्गत कहीं वह स्थिति विशेष में पात्रों की प्रतिक्रियाओं का स्वयं विश्लेषण करता है, तो कहीं स्वयं मौन रहकर पात्रों के द्वारा ही उनकी परिस्थितियों के सम्बन्ध में उनकी प्रतिक्रियाएं प्रस्तुत करवाता है। कई अवस्थाओं में लेखक पात्रों के सम्बन्ध में स्वयं कुछ नहीं कहता, अपितु पात्रों के पारस्परिक कथोपकथन द्वारा ही इनकी विशेषताओं को अभिव्यंजित करता रहता है। यह कार्य वह कहीं सम्बद्ध पात्रों के संवाद द्वारा करता है, तो कहीं सम्बद्ध पात्र के विषय में अन्य पात्रों के कथोपकथन के आयोजन से। इस प्रक्रिया में लेखक यथावश्यक पात्रों की कल्पना सृष्टि भी करता है।

समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रस्तुत पात्रों को अध्ययन की सुविधा के लिये, हम निम्नांकित वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। (१) शास्ता वर्ग, (२) मंत्री वर्ग, (३) सैन्य वर्ग, (४) आचार्य एवं द्विज वर्ग, (५) जन साधारण वर्ग एवं (६) स्त्री पात्र।

(१) शास्ता वर्ग : इस वर्ग में हिन्दू मुस्लिम और अंग्रेज शासकों का समावेश किया जा सकता है। इनमें से प्रत्येक जाति के शासकों की अपनी जातीय संस्कृति के कारण उनकी निजी विशेषताएं होती हैं। कुछ एक बातों के अन्तर के

अतिरिक्त प्रायः सभी शासकों में एक सी विशेषताएं दिखाई देती हैं, वे हैं, स्वायत्तताभिमान, निरंकुशता, न्यायपरायणता, प्रजापालन, दुष्ट दलन के लिये तत्परता, प्रदेश की रक्षार्थ युद्धपरता और विलासिता ।

(क) हिन्दू शासक वर्ग :

प्रस्तुत वर्ग के हिन्दी और गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में हिन्दू शासकों की तीन कोटियां, सम्राट्, राजा और सामन्त, हमारे सम्मुख आती हैं । बिम्बसार (सिंह सेनापति, वैशाली की नगरवधू) हर्षवर्धन और पुलकेसिन द्वितीय (चीवर) सुमाल्य नंद (आचार्य चाणक्य) बृहद्रथ और खारवेल (पुष्यमित्र) सम्राट् हैं । इनमें से श्री हर्षवर्धन एक आदर्श प्रजापालक सम्राट् हैं, जबकि बिम्बसार राज्यलिप्सु और विलासी तथा सुमाल्यनन्द और बृहद्रथ एकान्त-रूप से विलासी सम्राट के रूप में चित्रित किये गये हैं, जो अपनी विलासिता के कारण ही पराभव को प्राप्त होते हैं ।

मानसिंह (मृगनयनी) भीमदेव (सोमनाथ, जय सोमनाथ, कुम कुम अने आशका, चौला देवी और राज संन्यासी) काशीराज रत्नसिंह, कांचिराज त्रिभुवन कीर्ति (दिग्विजय) गृहवर्मा, देवगुप्त, ध्रुवसेन (चीवर), सिद्धराज जयसिंह, " रा' नवघण (गुजरातनो नाथ), मुंज और तैलप (पृथ्वी वल्लभ) चामुंडराय, भोज (नीलकंठनुं बाण), नामसता (देश दीवान) मांडलिक (रा' गंगाजळियो) और करणदेव (करण घेलो) नृपति वर्ग के हैं । इनमें से मानसिंह, भीमदेव, रत्न-सिंह और त्रिभुवन कीर्ति आदर्श हिन्दू राजा की कोटि में रखे जा सकते हैं । शेष में राजाओं की सी सौंदर्यप्रियता और विलासिता उनके जीवन को शासित किये हुई दीख पडती है ।

हुरमत सिंह खेंगार, सोहनपाल, नागदेव (गढ कुण्डार), घोघा बापा, सज्जन, और सामंत, अजयपाल, भीमपाल, धर्मगजदेव (सोमनाथ, जय

सोमनाथ) सामंत अर्जुन (चीवर) ईश्वर सेन लोरिक देव (बाणभट्ट की आत्मकथा) रा' रत्नादित्य त्रिलोचनपाल (जय सोमनाथ) रा' खेंगार (गुजरातनो नाथ) मिल्लमराज यादव (पृथ्वी वल्लभ) केसर मकवाणा (चौला) प्रभृति सामंत वर्ग में रखे जा सकते हैं। इनमें मिथ्याजात्यभिमान, विलासिता, अहंकार, स्वामि-भक्ति, स्वल्प स्वार्थों के लिये युद्ध, पारस्परिक छल-कपट, और षड्यंत्र आदि सामंत वर्ग की प्रवृत्तियां अभिव्यक्त हुई हैं। उपर्युक्त पात्रों में से घोघा बापा, सज्जन और सामंत, अजयपाल, भीमपाल, धर्मगन देव, रा 'रत्नादित्य, त्रिलोचन-पाल एवं केसर मकवाणा, का चरित्र सोमनाथ की रक्षार्थ युद्ध में उत्सर्ग हो जाने वाले कर्तव्यपरायण सामंतों के रूप में चित्रित हैं। शेष में सामान्य सामंतों की वृत्तियों का निरूपण हुआ है।

(ख) मुस्लिम शासक वर्ग :

हिन्दू शासक वर्ग की भांति इस वर्ग के शासकों में भी बादशाह सुल्तान, निजाम और नवाब जैसी कोटियां हैं। किन्तु इनमें से बादशाह के अतिरिक्त कोटि वालों में से प्रत्येक शास्ता की स्थिति को प्राप्त होते ही स्वायत बनता दिखाई देता है। अतः इनमें कोटिगत वैभिन्य नहीं रहता। शासक वर्ग की पूर्व निर्दिष्ट विशेषताओं के अतिरिक्त धार्मिक क्रूरता और निरंकुश बर्बरता इनमें विशेष रूप से दृष्टिगत होती है। इस वर्ग में सिकन्दर लोदी (मृगनयनी) अमीर महमूद गजनवी (सोमनाथ, जय सोमनाथ, कुम कुम अने आशका) बादशाह बहादुर शाह जफर (बेकसी का मजार) बेबिलोनिया का डिमिट्रियस, शाम का यूक्रेटिडस् मेनान्डर (पुष्यमित्र) हुम्मकराज (राज संन्यासी) शेरशाह (विक्रमादित्य हेमु) अलाउद्दीन खिलजी (करण घेलो) का समावेश होता है। इनमें से शेरशाह अपने मित्र विक्रमादित्य हेमु से प्रभावित होने के कारण धर्म सहिष्णु के रूप में निरूपित किया गया है। " सोमनाथ " और कुम कुम

अने आशका " में श्री चतुरसेन शास्त्री तथा चुनीलाल मडिया ने गजनी के अमीर महमूद के चरित्र को ऐतिहासिक बर्बरता के साथ मानवीय भावनाओं से युक्त दिखाने का प्रयत्न किया है। श्री शास्त्री जी इस बर्बर योद्धा को चौला (शोभना) के स्नेहांचल में प्रश्रय दिलवाते हैं, तो श्री मडियाने उसे प्रति क्षण अपनी मेंहदी बेगम के स्वास्थ्य के लिये उत्सुक दिखा एवं बहुला की समाधि पर अश्रुपूर्ण चित्रित कर उसकी प्रच्छन्न मानवीय भावना अभिव्यक्त की है।

मुहम्मद अघरा (मृगनयनी और रा'गंगाजलियो) गयासुद्दीन (मृगनयनी) नवाब वाजिद अलीशाह (बेकसी का मजार) आदि पात्र भी इसी वर्ग के हैं। इनमें से प्रथम खाने और युद्ध की अपनी विलक्षणता के लिये प्रसिद्ध है, जबकि अन्य अपनी निरंकुश विलासिता के लिये।

(ग) अंग्रेज शासक वर्ग :

अंग्रेज शासकों में स्वतंत्र जात्यभिमान, भारतीय प्रजा के प्रति तिरस्कार की भावना, निरंकुश दमन की वृत्ति, एवं भारतीय शासकों के प्रति छद्मव्यवहार दृष्टिगत होते हैं। इनमें शासन के विभिन्न स्तर हैं। लार्ड केनिंग, भारत के गवर्नर जनरल, सर जान लारेंस, पंजाब के गवर्नर, हेनरी लारेन्स, लखनऊ के कमिश्नर, सर गुबिन्स फाइनेन्स कमिश्नर, मिस्टर ओमाने ज्यूडिसियल कमिश्नर (बेकसी का मजार) के पद पर अपने शासन का संचालन करते हुए चित्रित हैं। इनमें से लार्ड केनिंग और हेनरी लारेन्स अपनी सहृदयता के लिये भारत में आये अंग्रेज शासकों में अपवाद स्वरूप हैं, जबकि अन्य में अंग्रेज शासकों की सी सामान्य विशेषताएं दृष्टिगत होती हैं।

२ मंत्री वर्ग :

राज्य के शासन का कुशल संचालन और राज्य का आंतरिक

और बाह्य शक्तियों से संरक्षण तथा उसकी श्री और सरस्वती की अभिवृद्धि मंत्रीवर्ग का उत्तरदायित्व है। इन्हें लक्ष्य में रखकर प्रत्येक कुशल मंत्री अपनी प्रतिभा, अपने सतत अन्वेक्षण, एवं योग्य मंत्रणा द्वारा राजा के राज्य-शासन में सहायक रहता है। वर्षकार (वैशाली की नगरवधू) अलीनकी और अजी मुल्लां (बेक्सी का मजार) विमलशाह और दामोदर मेहता (सोमनाथ, जय सोमनाथ, चौलादेवी एवं रान संन्यासी)

मुंजाल मेहता, शांति चन्द्र मेहता, सज्जन मेहता, तथा छदयन (गुजरातनो नाथ) वजीर मेरामण (देश दीवान), वीशल मंत्री (ए गंगा-जलियो) और माधव मंत्री (करण घेलो) इस वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं। इनमें से वर्षकार, मुंजाल मेहता और दामोदर मेहता अपने समय के परिप्रेक्ष्य में श्रेष्ठ मंत्रित्व के लिये अविस्मरणीय हैं। वजीर मेरामण आधुनिक जनतंत्रात्मक विचारों का समर्थक और अनुयायी होने के कारण मंत्री का एक आदर्श रूप हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है। माधव मंत्री और वीशल मंत्री अपने विलासी राजाओं द्वारा अपने प्रति किये अत्याचारों से विक्षुब्ध हो उनके पतन में अपनी शक्तियों का उपयोग करते चित्रित किये गये हैं। शेष अपने सामान्य मंत्रित्व का निर्वाह करते हैं।

२ सैन्य वर्ग :

इसमें सेनापति, सैन्य अधिकारी एवं सैनिक आदि कोटियां दिखाई देती हैं। सिंह सेनापति, कपिल, सेनापति सुमन, ~~चंबुल~~ बंधुल (सिंह सेनापति) महाबलाधिकृत मांडि, सेनापति सिंहनाद, सेनापति स्कंदगुप्त (चीवर) कमांडर-इन-चीफ सर हेनरी बसार्ड, ब्रिगेडियर विलसन, ब्रिगेडियर प्रान्ट, केम्प बेल, लेफ्टनेन्ट करनल डाज, मेजर हेरियट, मेजर एन्डरसन, केप्टन हडसन, सूबेदार मेजर माता बदल सिंह, सूबेदार बख्त सां, (बेक्सी का मजार) पुष्यमित्र (पुष्यमित्र)

चन्द्रगुप्त (आचार्य चाणक्य) दंडनायक त्रिभुवन पाल सोलंकी सेनापति उक्क परमार (गुजरातनो नाथ) सेनापति वालुकराय, (चोलादेवी, राज संन्यासी) सेनापति चत्रभुज दोषी, (देश दीवान) हेमचन्द्र (विक्रमादित्य हेमु) प्रभृति इसी कोटि के पात्र हैं। " शक्ति, साहस एवं शौर्य, युद्ध-कौशल, अनुशासन तथा स्वामिभक्ति के साथ राज्य की आंतरिक और बाह्य शक्तियों से प्रतिरक्षा इनका मुख्य कर्तव्य है। सम्बद्ध उपन्यासों में यद्यपि सभी अपने वर्ग के प्रतिनिधि पात्र हैं, तथापि भारतीय सेनापतियों एवं अंग्रेज सेनापतियों के व्यवहार में एक अन्तर दिखाई देता है। अपने शत्रु के प्रति सेनापतियों के व्यवहार में शत्रुता का आचरण सर्वथा औचित्यपूर्ण कहा जा सकता है, किन्तु अंग्रेज सेनापतियों द्वारा असैनिक भारतीय नागरिकों के प्रति घृणा एवं उनकी निरंकुश और निर्मम हत्या किसी सैनिक नियम के द्वारा ग्राह्य नहीं। सौजन्यपूर्ण जनरल हीवेट इनमें वस्तुतः एक अपवाद है। उपर्युक्त सेनापतियों में से पुष्यमित्र, चन्द्रगुप्त और विक्रमादित्य हेमचन्द्र युगीन परिस्थितियों के कारण सेनापति से स्वयं सम्राट् और राजा बनने में सफल हो जाते हैं।

इस वर्ग के अन्य पात्रों में काक (गुजरातनो नाथ) सिपह सालार मसूद और तिलक (सोमनाथ, जय सोमनाथ) हस्ति सेनाध्यक्ष राजसी (कुम कुम अने आशका) आदि सैनिक अधिकारी के रूप में चित्रित किये गये हैं। श्री मुंशीजी ने काक में सैन्य कौशल और राजनीतिक विदग्धता का अद्भुत समन्वय प्रस्तुत किया है। कीर्तिदेव (गुजरात नो नाथ) सिंहनाद, जयदेव(चोलादेवी और राजसंन्यासी) प्रभृति पात्र कुशल सैनिक और चर के रूप में चित्रित हैं।

४ आचार्य और द्विज वर्ग :

राजा एवं प्रजा को अपने कर्तव्य और नीति-नियमों के अनुसार आचरण का निर्देश करने वाले आचार्य आदि का समावेश इस वर्ग में किया जा

सकता है। ये अपने ज्ञान और नैतिक बल के आधार पर निःस्वार्थ भाव से समय समय पर राज्यकुल और प्रजा का मार्ग-दर्शन करते हैं। बोधन पुजारी विनयनंगम (मृग नयनी) आचार्य बहुलाश्व, अर्हत महावीर, गौतम बुद्ध, (सिंह सेनापति) तथा इन दोनों के साथ बादरायण व्यास, अजित केस कम्बली, गौतम वैशम्पायन आदि धर्म और दर्शन के आचार्य (वैशाली की नगरवधू) गंगा सर्वज्ञ, रुद्रभद्र, सर्वेश्वर, शिवराशि और गगनराशि (सोमनाथ, जय सोमनाथ) दिवाकर मित्र, आचार्य शीलभद्र (चीवर) आचार्य सुगतभद्र, अघोर भैरव, भट्ट शर्मा (बाणभट्ट की आत्मकथा) आचार्य विष्णु गुप्त चाणक्य (आचार्य चाणक्य) वीराचार्य, वय जल्लदेव, अखिलानंद, एवं ऋषिवर्य (नीलकंठ नुं बाण) भस्मांक देव, भुजंग स्वामी, नृत्याचार्य प्रमथेश (कुम कुम अने आशका) प्रभृति इस वर्ग के पात्र हैं। इनमें से आचार्य चाणक्य को चन्द्र गुप्त के सहयोग से भारत में राजनीतिक ऐक्य के लिये साम्राज्य स्थापित कर भारत की राजकीय शक्ति को संगठित करने वाले एवं जगद्गुरु शंकराचार्य को सांस्कृतिक एकता स्थापित करने वाले आचार्य के रूप में चित्रित क किया गया है। क्षत्रिय कुलोत्पन्न गौतम बुद्ध एवं महावीर रूढ ब्राह्मण धर्म की अपेक्षा प्रजा के समक्ष नया धर्म और दर्शन प्रस्तुत करनेवाले आचार्यों के रूप में निरूपित हैं। नृत्याचार्य प्रमथेश श्री महिमा का एक मनोवैज्ञानिक प्रयोग है। शेष पात्र प्रस्तुत वर्ग की उपरि-निर्दिष्ट अपेक्षाओं के अनुरूप चित्रित किये गये हैं।

इनके अतिरिक्त शाह हसन अस्करी और मौलवी अहमद शाह, अठारह सौ सत्तावन के भारतीय स्वातंत्र्य आन्दोलन के प्रखर प्रचारकों के रूप में अंकित हैं, जिन्होंने भारत के हिन्दुओं और मुसलमानों को देश-प्रेम की भावना उत्पन्न कर स्वतंत्रताप्राप्ति के लिये अभिमुख किया।

बाणभट्ट, भारवि, रविकीर्ति और कवि घावक जैसे कवि (चीवर, बाणभट्ट की आत्म कथा) अपने आश्रयदाता को वैयक्तिक, राजकीय,

एवं लोक कल्याण के कार्यों में उत्प्रेरित करते हैं । " कथा " में बाण नारी सम्मान के आदर्श के लिये समर्पित है । तो अघोर भैरव (बाणभट्ट की आत्म-कथा) कंक और सिद्धेश्वर (जय सोमनाथ) प्रभृति पात्र कौलानुयायी के रूप में निरूपित हैं ।

५ जन साधारण वर्ग :

इस वर्ग में ऐसे पात्र हैं जिनकी सृष्टि लेखक ने अपने निजी लक्ष्य की सिद्धि के लिये की है । इनमें से अधिकांश अपने जीवन में प्रेम, कर्तव्य और आदर्श के लिये समर्पित पात्र के रूप में प्रस्तुत किये गये हैं । उग्र प्रेमी अग्निदत्त (गढ कुंडार) समान भीरू प्रेमी दिवाकर (गढ कुंडार) और आदर्श प्रेमी अटल (मृगनयनी), चांद गौरी (देश दीवान), कर्तव्यमूर्ति तात्या टोपे (बेकसी का मजार), सोमनाथ के रक्षक का पुत्र (राज संन्यासी) आदि पात्र इस वर्ग के अविस्मरणीय पात्र हैं ।

६ स्त्री पात्र :

नारी मानव के जीवन की सहचरी है । वह अपने आकर्षण से उसके जीवन में जहां ज्वार उत्पन्न करती है, तो वहीं वह उसको शमन करने का सामर्थ्य भी रखती है । अपने उत्सर्ग और त्याग की भावना से वह उसके कर्तव्य-पालन में सहयोगिनी बन अपने वैशिष्ट्य का परिचय देती है । उसकी स्वार्थवृत्ति कई अवस्थाओं में मानव के लिये अवरोधक भी बन जाती है । इस प्रकार विभिन्न स्थितियों के अन्तर्गत मानव के जीवन में नारी के योगदान का वैविध्य दृष्टिगत होता है । प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में नारी राजमाता, राजमहिषी, राज कुमारी, सेविका, नर्तकी और सामान्या आदि कई रूपों में चित्रित की गई है ।

राज्यश्री (चीवर), सम्राट् हर्षवर्धन की बहिन, प्रव्रज्या ग्रहण

कर लोक हित के लिये किये गये लोक-सेवा और दास्य-मुक्ति जैसे कार्यों एवं उत्सर्गमयी जीवन के कारण लोकमाता के रूप में चित्रित है। मीनलदेवी (गुजरातनो नाथ), मृणालवती (पृथ्वीवल्लभ) और जीवूबा (देश दीवान) राज-माता के रूप में अपने राज्य और राजा के संरक्षण एवं मार्गदर्शन में सहायक रही हैं। जन-जीवन के अतिरिक्त इनका अपना वैयक्तिक जीवन भी है। मीनलदेवी का मुंजाल के प्रति एवं मृणाल का मुंज के प्रति प्रेम उनकी मानवीय प्रकृति का परिचायक है, तो जीवूबा की निरुवत के पतन में व्यक्त कुटिलता उनकी हत्या में परिणमित होती है। मृगनयनी, भुवन मोहिनी (मृग नयनी) राणकदेवी, (गुजरातनो नाथ) जक्कला देवी, लक्ष्मी देवी (पृथ्वी वल्लभ) रानी उदयमती (चौलादेवी, राजसंन्यासी), मेंहदी बेगम (कुम कुम अने आशका) कौला-देवी (करण घेलो), कुंता दे (रा गंगाजलियो) आदि राजरानी की कोटि के स्त्री-पात्र हैं। इनमें मृगनयनी और कुन्ता दे आदर्श रानी के रूप में चित्रित हैं, जो प्रेम और कर्तव्य के समन्वय द्वारा अपने पति के कर्तव्य-पालन में सहायक रहकर अपनी विशिष्टता का परिचय देती हैं। इनमें से कौला अपने पतन द्वारा दुर्बलता की मूर्ति के रूप में चित्रित की गई है। शेष का चित्रण उनके चरित्र के अनुरूप किया गया है। इनके साथ बेगम जीनत महल, बेगम हजरत महल (बेकसी का मजार) देश व्यापी स्वातंत्र्य आन्दोलन में सक्रिय और सहयोगी रही हैं। राजकुमारी की कोटि में हेमवती, मानवती (गढ कुंडार) भट्टिनी चन्द्र दीधिति (बाण भट्ट की आत्मकथा) पुष्प मंजरी (पुष्यमित्र) विलास वती (पृथ्वी वल्लभ) स्वाभिमान, सौन्दर्य और प्रेम की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित हैं।

अम्बपाली (सिंह सेनापति, वैशाली की नगरवधू) चौलादेवी (चौला देवी, राज संन्यासी) और निपुणिका (बाणभट्ट की आत्मकथा) क्रमशः गणिका, देवदासी और नर्तकी के रूप में प्रस्तुत हैं। इनमें से चौला अपनी गुण-गरिमा के कारण गुजरात के बाणावली भीमदेव और गुजरात के गौरव की

अभिवृद्धि में अपने सहयोग के कारण अनन्य महत्त्व की पात्र बन जाती है। अम्बपाली वैशाली के विनाश में कारणभूत होने पर भगवान बुद्ध से प्रव्रज्या ग्रहण कर अपने पापों का परिमार्जन करती है, तो बाण से भग्न-हृदय निपुणिका बाण को नारी उद्धार के कार्य में सहयोगी बना अपनी जीवन-लीला समाप्त कर देती है।

इनके अतिरिक्त रोहिणी (सिंह सेनापति) और महामाया (बाणभट्ट की आत्मकथा) जनता को स्वातंत्र्योन्मुख करने वाले स्त्री पात्र हैं। लाखी (मृगनयनी) और मंजरी (गुलरातनो नाथ) सामान्य वर्ग के अद्भुत स्त्री पात्र हैं। लाखी कर्तव्य, स्वाभिमान, और संघर्ष की मूर्ति है, तो मंजरी अपने कुल और ज्ञान के गर्व की पराकाष्ठा, जो संसार की वास्तविकता की अनुभूति पर सामान्य स्तर पर आती है।

उपर्युक्त पात्रों के बहिरंग एवं अन्तरंग चरित्र-चित्रण के लिये लेखकों द्वारा वर्णनात्मक, विश्लेषणात्मक एवं नाटकीय आदि विविध पद्धतियों का उपयुक्त प्रयोग दृष्टिगत होता है। पात्रों के प्रथम परिचय के लिये प्रस्तुत उनके संक्षिप्त रेखा-चित्र एवं शब्द चित्र द्रष्टव्य हैं। "मृग नयनी" में निन्नी और लाखी का शब्द चित्र यहां उल्लेखनीय है - वे दोनों समवयस्क थीं, आयु लगभग पन्द्रह सोलह वर्ष, परन्तु निन्नी बलिष्ठ और पुष्ट काया की, लाखी दुबली और छरेरी।"[1] इसी प्रकार "कुम कुम अने आशका" में भीमदेव और बहुला के शब्द चित्र द्रष्टव्य हैं - "तरुण और तेजस्वी श्यामल पर सलोना, शूरवीर फिर भी सरल हृदय।"[2] इन थोड़े ही शब्दों में भीमदेव का बाह्य और आंतरिक चरित्र अभिव्यक्त हो जाता है। बहुला का सांकेतिक चित्रण

१ मृगनयनी, पृ० ५

२ कुम कुम अने आशका, पृ० २४१

तो और भी मर्मस्पर्शी बन गया है - " यौवन के द्वार पर पदार्पण किये हुए, अपार्थिव सौन्दर्य के पुंजसी षोडसी कहती है कि मैं शिव निर्माल्य हूं । " [1] प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में ऐसे शब्द चित्र एवं रेखा चित्रों की विपुल सृष्टि है ।

परिचय के पश्चात् पात्रों का प्रभावात्मक चित्रण भी बड़ा प्रभावशाली एवं आकर्षक है । " बाणभट्ट की आत्मकथा " में भट्टिनी चन्द्रदीधिति के प्रथम दर्शन पर बाण द्वारा प्रस्तुत उसके व्यक्तित्व के प्रभाव का चित्र द्रष्टव्य है - " अहा, दृष्टि में इतनी पूतकारिता भी होती है । मानो वह दृष्टि पुण्यरश्मियों से द्रष्टव्य को उद्भासित कर रही थी, तीर्थ वारि धारा से प्लावित कर रही थी, तपस्या से पवित्र बना रही थी और सत्य के अन्तर्निहित ताप से हृदय के अशेष पाप भावों को भस्म कर रही थी । मुझे ऐसा लगा कि वेदों की पवित्र वाणी विग्रहवती होकर मुझे आज ब्राह्मणत्व के वरण योग्य बना रही है । " [2] यहां भट्टिनी के पावन और भक्तिमय व्यक्तित्व के प्रभाव की सम्यक् अभिव्यक्ति हुई है ।

आकृति वर्णन, एवं प्रभावात्मक चित्रण के अतिरिक्त पात्रों के विचार, उनके कार्य एवं उनकी क्रिया-प्रतिक्रियाओं के द्वारा भी उनके चरित्र की अभिव्यक्ति की गई है । पात्रों के व्यक्तित्व का विचारात्मक परिचय प्रायः उनके स्वगत कथन एवं कथोपकथन में प्राप्य होता है । निम्नी के विवाह के पश्चात् अटल को ग्वालियर के आश्रय से विरत करने में लाखी के विचारों का बड़ा हाथ है । उसके पीछे मर्म को अटल के न समझने पर लाखी उससे कहती है - " कोई मुझ को यदि किसी की चेरी कहे, चाहे वह निजकी ननद ही क्यों न हो, तो मैं नहीं सह सकूंगी और न यह सह सकूंगी कि तुमको कोई राजा का दास

---

१ कुम कुम अने आशका, पृ० २८

२ बाणभट्ट की आत्मकथा, पृ० २८

या रोठियारा कहे। हम लोगों को भगवान ने भुजाओं में बल दिया है और काम करने की लगन। कुछ करके ही ग्वालियर चलेंगे।" [1] यहाँ लाखी के विचार उसकी स्वाभिमानप्रियता, कर्मठता एवं आत्म-गौरव पूर्ण उसके व्यक्तित्व ध्वनित करते हैं। इसी प्रकार मुंजाल का गुजरात के प्रति गौरव कीर्तिदेव के अखंड आर्यावर्त के आदर्श के सम्मुख अपने गुजरात की छोटी सी झोंपडी की रक्षा में व्यक्त होता है। [2] चन्द्रगुप्त के साथ हुए विचार-विमर्श में आचार्य चाणक्य के भारत के समस्त छोटे छोटे राज्यों को एक सूत्र में संगठित करने और एक केन्द्रीय शासन की स्थापना के मूल में उनकी राजनीतिक जागरूकता और देश के प्रति उनकी कर्तव्य निष्ठा व्यक्त होती है। [3] जाति को एक अकस्मात और जीवन को कर्तव्य मानने वाले वजीर मेरामण के अपने भाई के लिये व्यक्त उद्गारों में - कि जब तक हम प्रजा के हित का विचार करेंगे और उसे साधेंगे, तभी तक प्रजा अपने पक्ष में रहेगी" में उसके जनतंत्र के समर्थक होने का परिचय प्राप्त होता है। [4] प्रस्तुत वर्ग की विविध कृतियों में व्यक्त पात्रों के विचार उनके व्यक्तित्व के वैविध्य को व्यक्त करते हैं।

विचारों की भांति पात्रों के कार्य और उनके द्वारा अस्तित्व में आने वाले घटना-व्यापार भी उनके व्यक्तित्व के परिचायक है। मानसिंह द्वारा निन्नी के शौर्य से प्रभावित हो उसका पाणिग्रहण एवं तदुपरांत यवनों से देश की रक्षा एवं मृगनयनी के अनुरोध स्वरूप कला का विकास उसके शक्ति एवं सौंदर्य से प्रभावित तथा कर्तव्य एवं कला से समन्वित व्यक्तित्व का परिचय देते हैं। इसी प्रकार वैशाली और मगध युद्ध में सिंह सेनापति की विजय बाणावली भीमदेव द्वारा गुजरात की शक्तियों को संगठित कर सोमनाथ की रक्षा, सम्राट

---

१ मृगनयनी, पृ० २००
२ गुजरातनो नाथ, पृ० १०१
३ आचार्य चाणक्य, पृ० ७२
४ देश दीवान, पृ० ९०

हर्षवर्धन का मोक्ष परिषद् के समय सब कुछ दान कर चीवर ग्रहण करना, बाण का छोटे राजकुल से भट्टिनी का उद्धार करना, आचार्य चाणक्य का विदेशी आक्रमण के समय देश की रक्षार्थ एक प्रबल केन्द्रीय शासन के लिये साम्राज्य स्थापित करना, मृणाल द्वारा गुजरात के गौरव की रक्षा, वजीर मेराभण द्वारा प्रजा के हित को राज्य का लक्ष्य मान राज्य का शासन करना आदि कार्यों द्वारा सम्बद्ध पात्रों के व्यक्तित्व की सम्यक् अभिव्यक्ति हुई है और तदनुरूप उनका सुन्दर चित्रण भी ।

वर्णनात्मक पद्धति द्वारा चरित्र-चित्रण में स्वाभाविकता उत्पन्न करने के लिये मनोविश्लेषणात्मक पद्धति एवं नाटकीय पद्धति का आश्रय भी आवश्यक हो जाता है । वैशाली के नियमानुसार अम्बपाली को अपनी इच्छा के विरुद्ध जब जनपद कल्याणी बनने को बाध्य किया जाता है, तो उसकी प्रतिक्रिया बड़े सशक्त शब्दों में व्यक्त हुई है - " मैं वैशाली के स्त्रैण पुरुषों का पूरा बदला लूंगी । मैं अपने स्त्रीत्व का पूरा सौदा करूंगी । मैं अपनी आत्मा का हनन करूंगी और उसकी लोथ इन लोलुप गिद्धों को उन्हीं की प्रतिष्ठा और मर्यादा के दामों पर बेचूंगी । "[1] " पृथ्वी वल्लभ " में मुंज के साथ मृणाल के प्रथम संभाषण पर उसकी मनोवृत्तियों का उद्वेलन, " नील कंठनुं बाण " में चामुंडराज के अंक्त अवंती की नर्तकी मल्लिका को शुक्ल तीर्थ महिलाश्रम में रख देने पर उसके वियोग से उत्पन्न मनोमन्थन, "बाणभट्ट की आत्मकथा " में बाण के स्थाणवीश्वर में मदनोत्सव के अवलोकन, आदि प्रसंगों पर विश्लेषणात्मक पद्धति का सम्यक् प्रयोग दृष्टिगत होता है ।

पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व के निरूपण द्वारा भी उनके चरित्र की

---

१ वैशाली की नगरवधू, पृ० २१

विशिष्टताओं का उद्घाटन अनेक उपन्यासों में किया गया है। " गढ कुंडार " में नागदेव के प्रणय निवेदन पर हेमवती द्वारा अपमानित और तिरस्कृत होने पर अग्निमित्र के मानवती को अपहरण करने की योजना में विफल होने पर " बाणभट्ट की आत्मकथा " में बाण के यवनदेश के लिये प्रस्थान पर, " आचार्य चाणक्य " में चन्द्रगुप्त से करमिका की विदाई पर, " गुजरातनो नाथ " में मीनलदेवी के सोम० के साथ मुंजाल के विवाह-प्रस्ताव पर " पृथ्वी वल्लभ " में मृणाल के कारागार में मुंज को दंड देने पर, " चौलादेवी " में पाटण के आन्तरिक विग्रह को लक्ष्य कर चौला के अवंती के लिये प्रस्तुत होने पर, सम्बद्ध पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का मर्मस्पर्शी निरूपण हुआ है।

पात्रों के चारित्रिक उन्मेष में परिस्थितियों का भी विशेष योगदान होता है। " चीवर " में श्री हर्षवर्धन को प्रथम सम्राट और उसके बाद शीलादित्य बनाने में उसकी विधवा भ्रातृजाया चमनिका एवं बौद्ध भिक्षुणी बहिन राज्यश्री का योगदान रहा है। " बाणभट्ट की आत्मकथा " में बाण कुमार कृष्णवर्धन को पुत्रोत्सव के समय आशीर्वाद दे ब्राह्मण के जीवन के लिये सन्नद्ध होकर जाता है, किन्तु मार्ग में निपुणिका का मिलना उसे भट्टिनी चन्द्र दीधिति के उद्धार की ओर मोड ले जाता है। श्री मुंशी के " जय सोमनाथ " में सोमनाथ पर महमूद का आक्रमण और उनकी रक्षार्थ ससैन्य भीमदेव का उपस्थित होना चौला और भीमदेव के मध्य प्रणय के प्रादुर्भाव में परिणमित होता है। सिकन्दर का भारत पर आक्रमण आचार्य चाणक्य को तक्षशिला विश्वविद्यालय से सक्रिय राजनीति के क्षेत्र में खींच लाता है। " विक्रमादित्य हेमु " में शेरशाह और उसके पुत्रों के निधन के उपरांत , अहमराम खाँ द्वारा दिल्ली पर आक्रमण शेरशाह के अनन्य मित्र हेमचन्द्र को विक्रमादित्य की स्थिति तक पहुंचा देता है। इस प्रकार परिस्थितियों के निरूपण द्वारा भी चारित्रिक पात्रों का उन्मेष प्रस्तुत किया गया है।

संक्षेप में उपर्युक्त विविध युक्तियाँ एवं पद्धतियाँ द्वारा प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासकारों ने अपने पात्रों के चरित्र-चित्रण को स्वाभाविक रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है। परिणामतः इतिहास के पृष्ठों पर शुष्क और नीरस प्रतीत होने वाले पात्र सम्बद्ध उपन्यासों में लेखक के हाथों में सर्वथा सजीव एवं प्रभावशाली दृष्टिगत होते हैं।

इसके उपरांत इस वर्ग के उपन्यासों में चरित्र-चित्रण की कुछ एक त्रुटियां भी दृष्टिगत होती हैं। कहीं कहीं उपन्यासकारों ने चरित्र को स्वतः विकसित होने देने की अपेक्षा उसके चारित्रिक विकास को स्वयं मोड देने का प्रयत्न करते रहे हैं। " गढ कुंडार " के दिवाकर और " मृगनयनी " के अटल के चरित्र इसके उदाहरण हैं। " पुष्यमित्र " में पुष्यमित्र का हेलन के साथ विवाह एवं उसकी पुत्री पुष्यमंजरी का यूरेक्रेडिटस के साथ विवाह ब्राह्मण धर्म परायण पुष्यमित्र शुंग के चरित्र के अनुकूल नहीं लगता। " बेकसी का मजार " में गुलशन का लिंग परिवर्तन, " गुजरातनो नाथ " में मुंजाल के प्रति मीनल देवी का प्रेम, " नय सोमनाथ " एवं " कुम कुम अने आशका " में चौला व बहुला का विलय आदि प्रसंगों पर पात्रों के साथ लेखक द्वारा किया गया हस्तक्षेप खलने लगता है।

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में मानसिंह, सिंह सेनापति, भीमदेव, सम्राट हर्षवर्धन, बाणभट्ट, आचार्य चाणक्य, पुष्यमित्र, बादशाह बहादुर शाह, मंत्रीश्वर मुंजाल, पृथ्वीवल्लभ मुंज, वनीर मेरामण, विक्रमादित्य हेमु, प्रभृति तथा स्त्री पात्रों में मृगनयनी, लाखी, रोहिणी, चौलादेवी, अम्बपाली राज्यश्री, महामाया, करमिका, मीनलदेवी और कुंतादे आदि के चरित्र बहुत ही प्रभावशाली एवं प्रेरणास्पद बन पडे हैं।

कथोपकथन :

उपन्यास में सजीवता और रोचकता की सृष्टि के लिये कथोपकथन का महत्त्व हम प्रस्तुत अध्ययन के प्रथम एवं चतुर्थ अध्याय में निर्दिष्ट कर आये हैं। ऐतिहासिक उपन्यास में यह और भी उपादेय है। इसके माध्यम से कथावस्तु एवं उसके पात्रों में सहज स्वाभाविकता एवं गतिशीलता प्रस्तुत की जा सकती है। इसके द्वारा लेखक पात्रों को आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करता है। पाठक लेखक से पात्रों के विषय में जानने के पश्चात् वह उन्हें निजी रूप में बोलते और अपनी प्रतिक्रियाएं व्यक्त करते देखने को उत्सुक होता है। ऐसी अवस्था में कथोपकथन का उपयोग न केवल पात्रों को सजीवता प्रदान कर उन्हें आत्माभिव्यक्ति का अवसर प्रदान करता है, अपितु पाठक के मन में उत्पन्न उनके विविध पक्षों-सम्बन्धी जिज्ञासा को भी तुष्टि प्रदान करता है। हिन्दी और गुजराती के समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यासों में कथोपकथन का प्रयोग हमें इसके पूर्ण वैविध्य में दृष्टिगत होता है कहीं कथावस्तु को गतिशील बनाने में, तो कहीं पात्रों के चरित्र-चित्रण, काल और परिस्थिति के निरूपण में एवं कहीं मानव जीवन के भावावेगों के अंकन में, जैसा कि परवर्ती विवेचन से प्रकट है।

" मृगनयनी " में बोधन का ग्वालियर के राजा मानसिंह के साथ प्रथम वार्तालाप राईगांव की निन्नी और लाखी के सौन्दर्य और लक्ष्य-वेध की चर्चा के साथ मानसिंह को राईगांव की ओर आकर्षित कर कथा को न केवल गति देता है, अपितु उसके आगामी मोडों का भी बीज वपन कर देता है। " सिंह सेनापति " में सिंह और आचार्य बहुलाश्व का प्रथम कथोपकथन सिंह को आचार्य का निःशुल्क अन्तेवासी बनने में सहायक होता है। पार्श्व आक्रमण के समय का उनका वार्तालाप सिंह को गांधार की रक्षार्थ

युद्ध में भाग लेने के लिए प्रवृत्त करता है । " सोमनाथ " में निर्माल्य ग्रहण के समय गंग सर्वज्ञ और भीमदेव का कथोपकथन एक ओर गजनी के आक्रमण के भय से परिचित करता है, तो दूसरी ओर उस आक्रमण से सोमनाथ की प्रति-रक्षार्थ भीमदेव के रक्षात्मक अभियान की ओर कथावस्तु को गतिशील बनाता है । " वैशाली की नगरवधू " में बादराथण के आश्रम में अम्बपाली और मगध सम्राट् का कथोपकथन कथावस्तु को वैशाली पर मगध-आक्रमण की ओर मोड देता है । इसी प्रकार " चीवर ", " बाणभट्ट की आत्मकथा " , "वैक्सी का मनार ", " आचार्य चाणक्य " आदि उपन्यासों में भी कथावस्तु को गति-शील बनाने में कथोपकथन सहयोगी रहा है ।

गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में, " पृथ्वी वल्लभ " में तैलप और भिल्लम के वरदान सम्बन्धी कथोपकथन में भिल्लम से कवियों की मुक्ति का वर मंगवा कर लेखक एक ओर मुंज के कवियों, रसनिधि और धनंजय, के लिये मुंज-मुक्ति और विलास-रसनिधि-प्रणय जैसे उपन्यास के आगामी परिच्छेदों में अवतरण की दिशाएं इंगित करता है, तो दूसरी ओर तैलप और अकलंक के संक्षिप्त वार्तालाप से कथावस्तु के " काष्ठ-पिंजर " प्रसंग की ओर गतिशील होने का संकेत प्राप्त होता है । " चौलादेवी " में चौला के पाटण विषयक अपने महान स्वप्न की सिद्धि न होने तक पाटण न छोडने का कथन सोरठी सिपाहियों द्वारा उसके अपहरण में परिणत होता है, दूसरी ओर रुद्र महालय में भीमदेव और दामोदर मेहता का वार्तालाप अवन्ती जाने के लिये उद्यत चौला को महाराज भीमदेव के अनन्य प्रेम की प्रतीति से उसे पुनः पाटण ले जाता है । उपन्यास के अन्त में महारानी उदयमती और दामोदर मेहता का कथोपकथन उत्तराधिकार सम्बन्धी कथावस्तु के संघर्ष का हल प्रस्तुत कर उसे अंत की ओर अग्रसर कर देता है । " कुम कुम अने आशका " में लक्ष्य-वेध प्रतिस्पर्धा में बहुला के भाग लेने पर भुजंग स्वामी का संक्षिप्त कथोपकथन उपन्यास के कथावस्तु

में एक आन्दोलन उपस्थित करता है। एक ओर प्रतिस्पर्धा में विजयी भीमदेव बहुला के प्रति आकर्षित होता है, तो दूसरी ओर जूनागढ के रा नवघण भीमदेव के लिये उदयमती के विवाह का तिलक भेजने की घोषणा कर जाते हैं। परिणामतः पाठक उत्सुक होकर कथावस्तु के साथ आगे बढने लगता है। इस प्रकार उपन्यास के कथावस्तु के प्रति पाठक को आकर्षित करने में एवं उसे गतिशील बनाने में कथोपकथन का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

पात्रों की चारित्रिक विशिष्टताओं का उद्घाटन करने में भी कथोपकथन का सम्यक् आयोजन हुआ है। " गढ कुंडार " में प्रेम और युद्ध की कथावस्तु है। इसीके अनुरूप इसके कथोपकथन की रचना हुई है। उदाहरणार्थ नागदेव और अग्निमित्र के मध्य परस्पर अपनी प्रणय गाथाओं के आदान-प्रदान करने में प्रेम पूर्ण कथोपकथन का प्रयोग हुआ है। " मृगनयनी " में मानसिंह का सामन्त निहाल सिंह सिकन्दर लोदी द्वारा अपनी अवहेलना होने पर उसे कह सुनाता है — " आपको भी जानना चाहिए कि आप किसी ऐरे-गैरे से बात नहीं कर रहे हैं। जिसके पुरखों ने इसी दिल्ली में लोहे की कील गाडी थी और जो फिर उससे भी बडी कील उ गाडने की दम रखता है, जिसके राजा ने कभी अरी के सामने सिर नहीं झुकाया, उसीका सामन्त सामने खडा है। दिल्ली को आपके पुरखों ने दो हजार टंकों में खरीद लिया होगा क्योंकि उसके दुर्दिन हैं, परन्तु ग्वालियर को विंध्याचल की तौल सोने के बदले में भी नहीं ले सकोगे। "[1] यहां निहाल सिंह की भाषा में उसका सामन्ती अभिमान और उसके आत्म गौरव की भावना प्रत्येक उद्गार से स्फुटित होती है। " वैशाली की नगरवधू " के आरंभ में आचार्य शाम्बव्य काश्यप के आश्रम में राज पुरुष, आचार्य, सोम और कुंडनी के कथोपकथन से कुंडनी के विषकन्या

१ मृगनयनी, पृ० १३६

होने का, राजपुरुष के महामात्य वर्षकार, आचार्य के राजकीय वैज्ञानिक एवं सोम के शस्त्रविद्या निष्णात एवं नीति-परायण योद्धा होने का परिचय सहज ही प्राप्त हो जाता है। " चीवर " में चपनिका और तरला द्वारा प्रयुक्त मागंधी और सम्राट के कथोपकथन से मागंधी के उन्मत्तावस्था में होने पर भी सम्राट् हर्ष वर्द्धन के शील और नारी के प्रति उनकी मर्यादा परायणता व्यक्त होती है।" गुजरातनो नाथ " में " वृक्ष के नीचे दो पुरुष " प्रकरण में काक और मुंजाल का संवाद काक के निर्भीक सुभट होने और मुंजाल के अजेय प्रतिमा के धनी होने का परिचय देता है। इसी प्रकार " मंजरी के स्वामी " में मंजरी और ~~शक्तीरा~~ जाया देवी का कथोपकथन तथा इसके बाद काक और मंजरी का कथोपकथन मंजरी के आत्मगर्विता होने का तथा काक के दुष्टजन-भीड भंजक होने का परिचय प्राप्त होता है। " राज संन्यासी " में अर्बुदपति धंधूकराज और प्राणपाल का संवाद उनकी कूटनीतिज्ञता का परिचय देते हैं। " कुम कुम अने आशका " में विजय माला के पश्चात् बहुला और भीमदेव का कथोपकथन दोनों के पारस्परिक प्रेम और हृदय के अशेष आदान-प्रदान की अभिव्यक्ति करता है, तो " सौभाग्य कंकण " प्रकरण में आयोजित कथोपकथन में महमूद के हाथी के दांत से बने दंतचूड की मांग से बहुला के अपने स्वामी की शौर्य-प्रेरक वीरांगना होने का तथा भीमदेव के इस मांग की स्वीकृति में उनके पराक्रम-प्रिय होने का परिचय होता है। भीमदेव और जयपाल तथा भीमदेव और बाजा ठाकुर के वार्तालाप में सम्बन्धित पात्रों के शौर्य, रण कौशल और उनके हुतात्मा होने की तत्परता व्यक्त होती है।

इसी प्रकार इस वर्ग के हिन्दी और गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में विविध प्रसंग और परिस्थितियों के अनुरूप कथोपकथन का सम्यक् आयोजन हुआ है। " बाणभट्ट की आत्मकथा " में संवादों की दीर्घता कहीं कहीं गत्यवरोध उत्पन्न करती है, किन्तु इसके अतिरिक्त अन्यत्र स्वरूप और

प्रयोग की दृष्टि से कथोपकथन सर्वथा सफल रहा है ।

वातावरण :

प्रथम अध्याय में हम निर्दिष्ट कर आये हैं कि वातावरण ऐतिहासिक उपन्यास का एक मुख्य एवं आधारभूत तत्त्व है । इसीके आधार पर ऐतिहासिक उपन्यासकार इतिहास के पात्रों और उनके क्रिया-कलापों को ऐतिहासिक तथ्यों की प्रस्तुति, संभाव्यता एवं यथावश्यक कल्पना के द्वारा देशकाल के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करता है कि वे चित्ताकर्षक एवं जीवन्त से लगने लगते हैं । इसके लिये यह आवश्यक है कि ऐतिहासिक उपन्यासकार को उपन्यास के देश-काल की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सर्वांगीण परिस्थितियों का सम्यक् ज्ञान हो और उसी के आधार पर तत्युगीन राजा, प्रजा, सैनिक, अधिकारी, एवं विविध वर्गीय व्यक्तियों के रहन-सहन, उनकी गतिविधियां, उनके रीतिरिवाज, उनकी मनोवृत्तियां और उनके आचार-विचार आदि का सम्यक् और सानुपात निरूपण हो ।

प्रस्तुत अध्याय के उपन्यासों को हम वातावरण की दृष्टि से निम्नांकित रूप में विभाजित कर सकते हैं —

(१) प्राचीन भारत से सम्बन्धित ऐतिहासिक उपन्यास,
(२) मध्यकालीन भारत से सम्बन्धित ऐतिहासिक उपन्यास, तथा
(३) मध्यकालीन भारत एवं आधुनिक भारत के संधिकाल से सम्बन्धित ऐतिहासिक उपन्यास ।

(१) प्राचीन भारत से सम्बन्धित ऐतिहासिक उपन्यास की कोटि में आने वाले उपन्यास हैं — (१) सिंह सेनापति, (२) वैशाली की नगरवधू, (३) चीवर, (४) बाणभट्ट की आत्मकथा, (५) आचार्य चाणक्य, (६) दिग्विजय,

तथा (७) पुष्यमित्र तथा (८) पृथिवी वल्लभ ।

(२) मध्यकालीन भारत के इतिहास पर आधारित ऐतिहासिक उपन्यास हैं — (१) गढ कुंडार, (२) मृगनयनी, (३) सोमनाथ, (४) गुजरातनो नाथ, (५) जय सोमनाथ, (६) नीलकंठनुं बाण, (७) चौलादेवी, (८) राज-संन्यासी, (९) देश दीवान, (१०) कुम कुम अने आशका, (११) रा गंगानलियो, (१२) विक्रमादित्य हेमु, एवं (१३) करणघेलो ।

(३) मध्यकालीन भारत तथा आधुनिक भारत के संधिकाल पर आधारित ऐतिहासिक उपन्यास है — (१) बेकसी का मजार ।

" सिंह सेनापति " में लेखक ईस्वी पूर्व छठी शताब्दी के वातावरण को जैन और बौद्ध ग्रन्थों के आधार पर इतिहास सम्मत रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास करता है, किन्तु गणतंत्रात्मक राज्यों के संघर्ष की गाथा एवं उनकी शासन-प्रणाली की श्रेष्ठता की स्थापना का मोह उसे कलागत लक्ष्य से दूर ले जाता है । पार्श्व-युद्ध में और मगध के साथ हुए युद्ध में सिंह की विजय, तथा इनके मूल में सामुदायिक सहयोग के कारण किये गये निश्चय और कार्यों से गणतंत्रात्मक शासन-प्रणाली की श्रेष्ठता अवश्य इंगित होती है, किन्तु यह तत्युगीन देशकाल का एक पक्षीय चित्रण ही है । राज्य तंत्र प्रधान राज्यों के कुत्सित पक्ष का ही इसमें चित्र प्रस्तुत किया गया है, उनके इतर पक्ष का नहीं । राजकीय पक्ष के अतिरिक्त गण के सामाजिकों में उन्मुक्त सौहार्द भाव, मदिरा, मांस तथा नृत्य के द्वारा इष्टजनों के स्वागत का आयोजन आदि प्रसंग उनके जन-जीवन का यथार्थ चित्र प्रस्तुत करते हैं । साम्यवाद के प्रति लेखक का झुकाव उन्हें उत्तर कुरु में देवों की संस्कृति और समाज-व्यवस्था के चित्रण के लिये प्रेरित करता है, जिसमें व्यक्त राज्य-परिवार की भावना उसे रूस और चीन के कम्यून के निकट ला उपस्थित करती है । डा० रामदरस मिश्र

ने ठीक ही कहा है कि " पुस्तक पढ जाने पर यह स्पष्ट विदित होता है कि लेखक इतिहास के कंकाल में साम्यवाद की सांस भरना चाहता है । "[1] कृति के अन्त में सिंह सेनापति को बुद्ध का अनुयायी बना हिंसा-प्रधान साम्यवाद और अहिंसामूलक बौद्ध दर्शन के समन्वय का प्रयास भी अप्रतीतिकर लगता है । वातावरण के निरूपण में लेखक ने कथोपकथन का सर्वाधिक आश्रय लिया है, जिसकी कई स्थानों पर दीर्घता कथावस्तु में गत्यवरोध एवं नीरसता का कारण बनती है । लेखक कृति से सम्बद्ध देश-काल के इतिहास का प्रखर विद्वान् है । किन्तु अपने राजनीतिक सिद्धान्तों के प्रतिपादन का मोह वातावरण के सम्यक् चित्रण में प्रतिबाधित रहा है । अतः प्रस्तुत उपन्यास में वातावरण के निरूपण में वह सर्वथा सफल नहीं कहा जा सकता ।

" वैशाली की नगरवधू " में वातावरण के निरूपण में लेखक ने अपने अद्भुत कौशल का परिचय दिया है । अमात्य वर्षकार और अजित केस कम्बली की कूट नीतियों के रोचक प्रयोगों द्वारा उपन्यास के राजनीतिक वातावरण का रोमांच निरूपण हुआ है । सर्व सुन्दरी अम्बपाली को जनपद कल्याणी के रूप में देखने के लिये अधीर युवागण, शोभा यात्रा में उस पर की गई पुष्प-वृष्टि, नारी अधिकार से वंचित एवं आत्म-हनन से पीडित अम्बपाली की वैशाली से प्रतिशोध लेने की भावना, गणनक्षत्र और मधुपर्व के उत्सवों द्वारा वैशाली के नागरिकों की विलासिता, दस्यु बलभद्र के सम्मुख उनकी दयनीय असमर्थता, आदि प्रसंगों के आयोजन द्वारा लेखक ने युग के मानसिक और सांस्कृतिक वातावरण का हृदयस्पर्शी चित्रण किया है । अमात्य वर्षकार, अम्बपाली और सोम के अवैध संतान होने एवं राजकुमार विडूडभ के दासी-पुत्र होने के रहस्योद्घाटन द्वारा लेखक ने युगीन वर्णसंकरता का भी सम्यक् निरूपण किया है । इस प्रकार प्रस्तुत

1 डा० रामदरस मिश्र, हिन्दी उपन्यास, पृ० १६६

उपन्यास में वातावरण के निरूपण में लेखक के प्रयत्न सर्वथा सफल कहे जा सकते हैं।

डा० रांगेय राघव का " चीवर " ईस्वी पश्चात् सातवीं शताब्दी का उपन्यास है। इस समय गृहवर्मा के साथ राज्यश्री के विवाह से वर्द्धनों और मौखरियों की शक्ति उत्कर्ष पर थी। अन्य राज्यों को यह सह्य नहीं था। वसंतोत्सव के समय देवगुप्त द्वारा गृहवर्मा का वध और राज्यश्री को उठा ले जाना एवं इसके प्रतिशोध के लिये निकले राज्यवर्द्धन का शशांक द्वारा छल से वध किया जाना आदि प्रसंगों से युगीन राजनीतिक परिस्थितियों को प्रस्तुत किया गया है। समाज में वर्णाश्रम व्यवस्था का पालन, स्त्रियों और शूद्रों की दयनीय स्थिति, बौद्ध धर्म का प्रबल प्रसार तत्कालीन सामाजिक और सांस्कृतिक स्थितियों को व्यक्त करते हैं।

श्री हर्ष की गोष्ठी में बाण का कादम्बरी पाठ, श्री हर्ष की काव्य-रचना, बेगार पीड़ित शूद्र की दयनीय अवस्था देखकर राज्यश्री का शूद्र वर्ग को बेगार-मुक्त करना, भैरवी-साधना में भिक्षुणी के गर्भाधान की स्थिति से बौद्ध धर्म में तंत्र-साधना का प्रवेश, मदनिका और मागंधी आदि नारियों की उपरिगुप्त और अर्जुन सामंत द्वारा लक्ष्य-सिद्धि पर नृशंस हत्या, " दंत स्मारक " द्वारा बौद्ध धर्म का उत्कर्ष एवं मोक्ष परिषद् आदि प्रसंगों के आयोजन से लेखक ने कृति के सर्वांगीण वातावरण को बड़ी कलात्मकता के साथ अंकित किया है।

" चीवर " की भांति आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीकृत " बाणभट्ट की आत्मकथा " भी सातवीं शताब्दी पर आधारित है। इसकी राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियां चीवर की सी हैं। अन्तर केवल यह है कि हर्ष के बौद्ध धर्मानुयायी होने पर समस्त उत्तरापथ शौर्य और

पराक्रम शून्य बताया गया है । इसीलिये सीमांत पर दस्युओं के छुट-पुट आक्रमण आरंभ हो गये थे । यह तथ्य ऐतिहासिक सम्भाव्यता के पर आधारित है, जिसका निरूपण कृतिकार ने उसे इतिहास की संगति में रख कर ही किया है । सीमांत दस्युओं के आक्रमण की भीति और प्रजा की राजनीतिक पराङ्मुखता का चित्र लेखक ने कृति के चतुर्दश उच्छ्वास में प्रस्तुत किया है, जहां महामाया प्रजा से राज्य-सत्ता पर सर्वथा आश्रित न रह कर स्वावलम्बी बनने के लिये आह्वान करती है ।

प्रस्तुत उपन्यास अपने सांस्कृतिक वातावरण के मनोरम निरूपण के लिये प्रसिद्ध है । लेखक ने इसमें पुत्र जन्मोत्सव, मदन-पूजा, मदनोत्सव, एवं होलिकोत्सव के प्रसंगों पर नृत्य, संगीत, नाट्य एवं धर्मोपासना आदि संस्कृति के समस्त अंगों का मनोहारी चित्रण किया है । आचार्य सुगतभद्र और वसुभूति, अघोर भैरव और महामाया एवं सुचरिता तथा विरतिवज्र के माध्यम से तत्कालीन बौद्धधर्म, कौलाचार एवं नारायणोपासना की ओर भी इंगित किया है । वातावरण के निरूपण के लिये घटना, पात्र, और परिस्थितियों के माध्यम के अतिरिक्त लेखक ने वस्तु, काल, सम्बोधन संभाषण एवं उद्बोधन के लिये भी तत्कालीन व्यवहार्य शब्दावली का प्रयोग किया है, जिससे पाठक कृति के वातावरण की सहज अनुभूति करने लगता है । इस प्रकार " कथा " में लेखक वातावरण के निरूपण में पूर्णतया सफल रहा है ।

" आचार्य चाणक्य " चौथी शताब्दी ईस्वी पूर्व की विच्छिन्न भारतीय राजनीति को प्रस्तुत करता है, जबकि देश कई जनपदों में विभाजित था और इसी कारण सिकन्दर अपनी विपुल सैन्य-शक्ति के साथ भारत पर आक्रमण कर सिंध से व्यास तक के प्रदेश को विजित कर सका । इन्हीं परिस्थितियों में तक्षशिला के आचार्य चाणक्य ने देश की बाह्य-आक्रमणों से रक्षा करने के लिये कुमार चन्द्रगुप्त की सहायता से मौर्य साम्राज्य की स्थापना की । आचार्य

चाणक्य के कौटिल्यशास्त्र पर आधारित प्रस्तुत उपन्यास में निरूपित राजनीतिक वातावरण सर्वथा इतिहास सम्मत है। [1]

केकय राज्य की अपने गूढ पुरुषों, नटों और रूपजीवाओं द्वारा प्रयुक्त कूटनीतियों से गांधार-विजय, वक्रनास की नीतियों द्वारा महापद्म नंद की हत्या, एवं शाकटायन को बंदी कर सुमाल्य नंद को सिंहासनारूढ करना आदि घटनाओं के संयोजन से लेखक ने तत्कालीन राजनीतिक गतिविधियों का सम्यक् निरूपण किया है। सिकन्दर के आक्रमण के समय केकय विजित गांधारराज आंभि का सिकन्दर को आत्म समर्पण, आचार्य चाणक्य की मगध-यात्रा और देश की रक्षार्थ सशक्त केन्द्रीय शासन की स्थापना के प्रयत्न, विजित गांधार और केकय में यवन-विरोधी छात्र-आंदोलन युग के मानसिक वातावरण को भी व्यक्त करते हैं। इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में केवल राजनीतिक वातावरण का ही निरूपण हुआ है।

" दिग्विजय " जगद्गुरु शंकराचार्य के सांस्कृतिक एकता के महत् कार्य को लेकर लिखा गया ऐतिहासिक उपन्यास है। उन्होंने काशी, कांची, प्रतिष्ठानपुर और तक्षशिला जैसे भारत के विख्यात धामों की यात्रा करके एवं कुमारिल भट्ट के शिष्य प्रभाकराचार्य, और मंडनमिश्र जैसे पंडितों से शास्त्रार्थ कर तत्युगीन रूढिवादिता समाप्त की और सांस्कृतिक एकता की स्थापना की। विविध देवों में ब्रह्म के विविध स्वरूपों की अभिव्यक्ति के बोध द्वारा एवं उनके प्रति अविरोधी भाव के साथ निजी उपासना करने के सिद्धान्त के प्रचार तथा काशी-धर्म-सभा में नीलाम्बरा जैसी देवदासियों के विवाह की सम्मति द्वारा लेखक

१ आचार्य चाणक्य, पृ० १०-११

२ श्री वी० डी० महाजन, पृ० २०१-११

ने सांस्कृतिक, धार्मिक एवं सामाजिक वातावरण को निरूपित करने का एक सफल प्रयत्न किया है ।

" पृथिवी वल्लभ " दसवीं शताब्दी के मालवराज मुंज और मृणाल के प्रणय-प्रसंग को लेकर लिखा हुआ ऐतिहासिक उपन्यास है । यद्यपि इसमें युगीन राजनीतिक सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण के निरूपण के लिये कोई अवकाश नहीं है, तथापि मृणालवती की कठोर वैराग्यनीति से ग्रस्त शुष्क, और नीरस देश में तैलप की " विजय सवारी " द्वारा विजेतादेश के विजयोल्लास का, " काष्ठपिंजर " " पाद-प्रक्षालन " और " भिक्षा " आदि प्रसंगों में विजयी तैलप के गर्वान्वित मानस का, पराजय की वेला में भी मुंज की स्वस्थता का, कारागार में मुंज को गर्व-विगलित करने के लिये प्रस्तुत मृणाल के उसके साथ संभाषण पर मृणाल के अन्तर्द्वन्द्व का, विलासवती और रसनिधि के मध्य भवभूति के काव्य सुमेरुओं की यात्रा के मनोरम वर्णन से स्नेह-सिक्त युवा हृदयों का, अपनी पुत्री विलासवती के अकलंक द्वारा वध किये जाने पर लक्ष्मी देवी के विद्रोह में आहत स्वातंत्र्य और स्वाभिमान का निरूपण कर लेखक उपन्यास के वातावरण का मनोरम चित्रण करता है । कृति में धनंजय, पद्मावत, एवं रसनिधि (भोज) जैसे समसामयिक कवियों के अवतरण एवं उनकी काव्यात्मक अभिव्यक्ति के आयोजन से पाठक युगीन वातावरण में रमण करने लगता है । अतः यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कृति में मुंशीजी ऐतिहासिकता के साथ पात्रों के मानसिक वातावरण की सृष्टि में भी सफल रहे हैं । " पुष्यमित्र " ईस्वी पूर्व द्वितीय शताब्दी का ऐतिहासिक उपन्यास है । बृहस्पति मित्र तथा ऋषि पतंजलि के साथ विभिन्न पात्रों के कथोपकथनों द्वारा सांस्कृतिक, सामाजिक

१ श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, पृ० १५९-६२

२ श्री मेरुतुंगसूरिकृत प्रबंध चिंतामणि, मुंजराज प्रबंध, पृ० २३-२७

एवं धार्मिक वातावरण को निरूपित करने का प्रयत्न भी इतिहास सम्मत है। किन्तु बल्ख के शाह डिमिट्रियस का अपने दामाद पुष्यमित्र की सहायता के लिये भारत पर आक्रमण, एवं अपने धर्म और संस्कृति के आग्रही पिता पुष्यमित्र द्वारा शाम के बली अहेद अपोलाडोटस से साथ अपनी पुत्री पुष्यमंजरी का विवाह लेखकों की कल्पना के स्वैर विहार हैं,[1] जिनकी इतिहास के साथ कोई संगति नहीं बैठती। स्त्रियों का पुरुषों के साथ हस्त चुम्बन, कुचों द्वारा उनका चुंबन, तथा पुरुषों के साथ गुफ्तगू एवं युगल नृत्य के आयोजन द्वारा लेखकों ने यवन-संस्कृति का भी निरूपण किया है। इसके अतिरिक्त " डिनर " " कुसीमिन " सम्मेलन में " बहनों और भाइयो " तथा " मान्य महिलाओं एवं भद्र पुरुषों " के सम्बोधन, हर्ष सूचक करतल-ध्वनि के प्रयोग, साम्राज्य-युग में कलिंग के ऐक्य-सम्मेलन में व्यक्त लोकतंत्र की सी भावना की अभिव्यक्ति और ईस्वी पूर्व द्वितीय शताब्दी में ब्रजभाषा के काव्यांशों का प्रयोग सम्बद्ध देशकाल के विपरीत है। अतः प्रस्तुत उपन्यास में वातावरण का निरूपण पूर्णतया सफल नहीं कहा जा सकता।

" गढ कुंडार " और " मृगनयनी " श्री वृन्दावनलाल वर्मा के मध्यकालीन इतिहास से सम्बन्धित उपन्यास हैं। पूर्ववर्ती अध्याय के " झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई " एवं " अहिल्याबाई " के सन्दर्भ में हम यह निर्दिष्ट कर आये हैं कि बुंदेल खण्डीय प्रकृति और वहाँ के जन-जीवन का चित्रण इनके उपन्यासों की विशिष्ट उपलब्धि है। " गढ कुंडार " में कुंडार के वन, नदी, और पहाडियों के, एवं " मृगनयनी " में ध्वस्त डाईगांव के हरेभरे खेत, सांक नदी, वहाँ के वन और घने जंगल आदि के पूर्णतया यथार्थ और मनोरम चित्र हैं। बुंदेलखण्ड के इस अपूर्व सौन्दर्य को देखकर " गढ कुंडार " का

---

1 श्री मिश्रबंधु, पुष्यमित्र, भूमिका, पृ० ७-८

दिवाकर कह उठता है — " इस सुन्दर देश के लिये प्राण देना बड़े गौरव की बात होगी । " [1] जंगलों में शिकार के प्रसंगों के चित्रण में जंगली झाड़ियों की स्थिति और वहां शिकारी की निस्तब्धता के साथ शिकार की ओर संचरण की प्रक्रिया के निजी अनुभव पर आधारित चित्र तो बहुत ही साहजिक हैं । इसी प्रकार " गढ कुंडार " में नागदेव और हेमवती विवाह को लेकर लंगार और बुंदेलों के जातिगत भेदभाव से उत्पन्न वैमनस्य, तथा वीरता एवं प्रतिशोध की भावनाओं का सम्यक् चित्रण किया गया है । " मृगनयनी " में निरूपित सिकन्दर की धर्मांधता युग के ऐतिहासिक परिवेश को पूर्णतया अभिव्यक्त करती है । अटल और लाखी के विवाह के लिए बोधन पुजारी की असम्मति और गांव का लोकापवाद तथा आक्रमणों के उपरांत भी संगीत और स्थापत्य कला का विकास तत्कालीन सामाजिक रूढिवादिता और सांस्कृतिक वातावरण को प्रस्तुत करते हैं । इस प्रकार वर्माजी अपने उपर्युक्त दोनों उपन्यासों में बुंदेल खंडीय प्रकृति और ऐतिहासिक परिवेश के निरूपण में सर्वथा सफल कहे जा सकते हैं ।

" सोमनाथ " ग्यारहवीं शताब्दी (१०२५) में प्रभास पाटण में स्थित हिन्दुओं के देवधाम सोमनाथ पर महमूद गजनवी के आक्रमण को प्रस्तुत करता है । इस समय भारत अनेक खण्ड-राज्यों में विभाजित था और ये सभी अपने क्षुद्र स्वार्थ और परस्पर ईर्ष्या-द्वेष में लीन थे । इसी लिये विपुल सैन्य के साथ महमूद मुल्तान, लोहकोट, सपाद लक्ष और गुजरात की सीमाओं को चीरता हुआ सोमनाथ पहुंच जाता है । देव धाम के आक्रान्ता महमूद को आमंत्रित करने के लिये राजनीतिक परिस्थितियों के साथ हमारी धार्मिक परिस्थितियां भी उत्तरदायी थीं । सोमनाथ भारत में पाशुपत सम्प्रदाय का केन्द्र था । समस्त देश के श्रद्धालु भक्तों के माध्यम से देश की अतुल सम्पदा यहां खिंची आती थी ।

oooooooooooooooo

१ गढ कुंडार, पृ० १८४

अनेक देवदासियाँ देव के सम्मुख नृत्य करती रहती थीं और दुःखद आश्चर्य यह कि इस सब सम्पदा की रक्षा के लिये कोई संरक्षणात्मक प्रबंध नहीं। कृति में उपर्युक्त परिस्थितियों का चित्रण सर्वथा इतिहास सम्मत है।[1]

प्रस्तुत उपन्यास में लेखक ने मुलतान के अजयपाल द्वारा मुलतान और लोह कोट का मार्ग महमूद के लिये प्रशस्त करवा कर, युद्ध में विजय के उपरांत भी सपाद लक्ष के धर्मगज देव की हत्या, तथा भयंकर और क्रूर शत्रु से संघर्ष के हेतु शक्ति-संचय के लिये भीमदेव से पाटण खाली करवा कर एवं गुजरात के राज्यों की सैन्य-शक्ति को देव की रक्षार्थ प्रभास में एकत्रित करवा कर तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों और गतिविधियों का यथार्थ निरूपण किया है।

महालय की विभूति के वर्णन, और " पाशुपत मत की वाममार्गी शाखा के अघोरियों की पूजा-विधियों के चित्रण तत्कालीन धार्मिक वातावरण को प्रस्तुत करते हैं। विप्रवर्य कृष्णस्वामी के दासीपुत्र देवास्वामी के मंत्र पाठ करने पर लोगों के आक्रोश " मारो साले शूद्र को, वेद पढ़ता है नीच, अधर्मी। "[2] में तत्कालीन सामाजिक रूढ़िवादिता और क्रूरता व्यक्त है। विदेशी आक्रान्ताओं की लूट-खसोट की अदम्य अभिलाषा देश की आर्थिक सम्पन्नता की सूचक है, किन्तु यह सम्पन्नता राजा, ब्राह्मण और सेठों के यहाँ विद्यमान थी। शेष वर्ग सर्व साधारण अवस्था में था। इस प्रकार लेखक ने आक्रमणकालीन परिस्थितियों का यथार्थ और जीवन्त निरूपण किया है।

---

१ (I) श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, २५७-६९

(II) प्रो० कमेसेरियट, हिस्टरी आफ गुजरात,

२ सोमनाथ, पृ० २४१

पाट
~~सम्पदलक्ष~~, आबू-प्रदेश, और पाटण में महमूद द्वारा किया नर संहार, और विध्वंस के कार्य, सोमनाथ पर उसका आक्रमण, और भीमदेव का समस्त प्राप्य सैन्य शक्ति के साथ उसका संरक्षण, लौटते समय कच्छ के रेगिस्तान में महमूद की सैन्यशक्ति का विपुल विध्वंस आदि के चित्रण द्वारा लेखक ने युद्ध के वातावरण का भी सजीव एवं प्रभावशाली चित्रण किया है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि " सोमनाथ " में शास्त्रीजी कृति के काल का समग्र वातावरण प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं।

" जय सोमनाथ " और " कुम कुम अने आशका " इसी प्रसंग को लेकर लिखे हुए दो और उपन्यास हैं। " जय सोमनाथ " में श्री मुंशीजी ने आक्रमणकालीन देश की राजनीतिक और धार्मिक परिस्थितियों का ही इतिहास सम्मत चित्रण किया है जिनका विवेचन पूर्ववर्ती पृष्ठों में प्रस्तुत किया जा चुका है। देश की सामाजिक परिस्थितियों की ओर उनका लक्ष्य नहीं रहा और आक्रमण की परिस्थितियों में ~~भी~~ यह सहज स्वाभाविक भी है। शिल्प की दृष्टि से जय सोमनाथ में वातावरण का निरूपण सर्वथा जीवन्त और प्रभावशाली रहा है। " कुम कुम अने आशका " में सम्बद्ध वातावरण का निरूपण करने में श्री मांडिया ने श्री मुंशीजी का ही अनुसरण किया है। इन्हों ने यात्री-कर और भंडारी नन्ददत्त द्वारा कावडियों के शोषण का चित्रण कर तत्युगीन आर्थिक वैषम्य और लोक-कल्याण की उपेक्षा के प्रति भी संकेत किया है।

" गुजरातनो नाथ " में सिद्धराज जयसिंह के राज्यारोहण के बाद की राजनीतिक और अंशतः धार्मिक परिस्थितियों का चित्रण है। उपन्यास के आरंभ में मालव आक्रमण से भयभीत पाटण के द्वार बंद होने से शीत ऋतु की रात्री में सरस्वती नदी के किनारे नगर-प्रवेश के लिए प्रातःकाल की प्रतीक्षा में एकत्रित त्रस्त जन-समुदाय, और प्रस्तुत परिस्थिति में अदिवस्नमन काकमद्रु और

निर्द्वन्द कृष्णदेव (सेंगार) के कथोपकथन, जूनागढ के पाटण पर आक्रमण की तिथि की सूचना ले जाने वाले वीशलदेव और काक के कथोपकथन एवं इन पर कडी दृष्टि रख कर इन अभियानों को विफल करने वाले मुंजाल की कूटनीति तत्युगीन राजनीतिक ~~का~~ परिवेश का जीवन्त निरूपण करती है।

विप्रकन्या मंजरी के साथ विवाह के लिये श्रावक मंत्री उदयन के प्रयत्न, काक के हस्तक्षेप से उसमें उदयन की विफलता, खंभात में जैनियों द्वारा खतीप जैसे म्लेच्छों का विध्वंस, तत्युगीन शैव और जैन धर्म की स्थिति को व्यक्त करते है। हींगलाज श्मशान में काक द्वारा कीर्तिदेव के पितृ-कुल-ज्ञान से तत्युगीन भैरवोपासना का अस्तित्व प्रकट होता है। इस प्रकार उपन्यास में प्रस्तुत युगीन परिस्थितियों का जीवन्त और मनोरम चित्रण करने में लेखक सर्वथा सफल रहा है।

" नील कण्ठनुं बाण " चामुंडराय (९९७-१०१०) के उत्तरकाल से सम्बन्धित उपन्यास है। चामुंड का शासन-काल शांति और स्थिरता का काल था। मालवपति सिंधुराज और भोज उसके समसामयिक थे गुजरात के साथ इनके राजनीतिक सम्बन्ध काफी तनाव पूर्ण थे। शैव और जैन धर्म यथावत् अपनी प्रगति कर रहे थे।

श्री चुनीलाल वर्धमान शाह ने अवंती की नर्तकी मल्लिका द्वारा नीलकण्ठ की चोरी, चामुण्ड की काशी-यात्रा के समय मालव सेनापति द्वारा उसके राज्य चिह्नों का अपहरण, तथा इसके प्रतिशोधार्थ चामुंड के ज्येष्ठ पुत्र वल्लभराज

---

१ श्री रघुवीर चौधरी एवं श्री राधेश्याम शर्मा, गुजराती नवलकथा, पृ० १२२
" मुंशी के पास सांस्कृतिक वातावरण अनुभव कराने वाला इतिहास नहीं है। "

द्वारा मालवा पर अभियान और धारा के घेरे द्वारा तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियों का यथार्थ निरूपण किया है। नीलकंठ की चोरी के अतिरिक्त शेष तथ्य इतिहास सम्मत हैं।[1] पाटण में और ऋषिवर्य के आश्रम में शिव-भक्ति परायण चामुंड की विविध क्रियाओं द्वारा अंशतः तत्युगीन धार्मिक स्थिति व्यक्त होती है। वाविणी देवी के प्रति चामुण्ड के अयोग्य व्यवहार के कारण उससे राज्य का परित्याग करवाने के वाविणी के प्रयत्न एवं मल्लिका के उद्धार के लिये चामुंड के प्रयत्नों द्वारा लेखक ने पात्रों की मानसिक प्रति-क्रियाओं के निरूपण में भी अपने कौशल का सुंदर परिचय दिया है। वास्तव में ऐतिहासिक परिस्थितियों और चामुंड की मनःस्थिति के निरूपण में लेखक पूर्णतया सफल कहा जा सकता है।

" चौला देवी " में सोमनाथ पर महमूद के आक्रमण के पश्चात् पाटण और गुजरात की परिस्थितियों का आलेखन है। उक्त आक्रमण में भीम-देव और पाटण-सैन्य की पराजय के कारण गुजरात की स्थिति डावांडोल हो चली थी। एक ओर अर्बुदपति धंधूकराज और नडूल के चौहान जैसे पाटण के सामन्त स्वतंत्र हो गये थे, तो दूसरी ओर मालवराज भोज पाटण पर विजय के स्वप्न देख रहा था। उधर राज्य के अन्तर्गत चौला के " रानी " पद को लेकर आन्तरिक संघर्ष भी चल रहा था। उपन्यास की उपर्युक्त राजनीतिक स्थिति सर्वथा इतिहास संगत है।[2]

अवंती की गुप्तचर प्रतापदेवी की पाटण के राजमहल में

---

१ (I) डा० आर० के० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० १०५-१०६
(II) गुजरात विधासभा, गुजरातनो इतिहास, १४७-४८

२ (I) श्री क० मा० मुंशी, ग्लोरी दैट वाज गुर्जर देश, पृ० २५३-५६
(II) डा० आर० के० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० १११-१३

- आगे देखिए

ताम्बूल वाहिनी के रूप में नियुक्ति, लोढ के माध्यम से उसके द्वारा पाटण की गतिविधियों सम्बन्धी संदेशों के आदान-प्रदान, नडूल और मेवाड की ओर सेनाओं के अभियान, तथा मृदंग वादन के प्रसंग के आयोजन से लेखक ने सम्बद्ध काल की परिस्थितियों का जीवन्त चित्रण प्रस्तुत किया है। चौला के " रानी " पद और राज्य के उत्तराधिकार के सम्बन्ध में दामोदर मेहता के प्रयत्नों से उदयमती को उसके कुमार के उत्तराधिकारी होने के विषय में चौला की ताम्रपत्र पर वचनबद्धता के द्वारा लेखक उसका सुखद समाधान प्रस्तुत करता है। इस प्रकार कृति की परिस्थितियों के मध्य पाटण के आंतरिक संघर्ष के निरूपण में लेखक सर्वथा सफल कहा जा सकता है।

" राज संन्यासी " " चौलादेवी " की राजनीतिक पृष्ठ-भूमिका पर आधारित है। इसमें भीमदेव आबू और नडूल के अपने सामन्तों को पुनः अपनी अधीनता में ले सिंध पर विजय प्राप्त करके अपनी स्थिति सुदृढ बनाता है। दामोदर मेहता द्वारा आबू पर घेरा डालने पर अर्बूपति धंधूकराज के गुप्त मार्ग से मालव आश्रय में जाने के समय मार्ग में दण्डनायक विमलचन्द्र शाह को प्रस्तुत कर उन्हें भीमदेव के आधिपत्य के लिये तैयार करने तथा आबू के वन में शिकार के समय हाथी को पागल कर भीमदेव पर आक्रमण करने नडूल के राजकुमार ~~सामन्तसिंह~~ बालाप्रसाद के षड्यंत्र को पार्श्ववर्ती मंदिर में चौला के मृदंग वादन द्वारा विफल करने वाले कूटनीतिक दावपेंचों से युगीन राजनीतिक परिवेश को बडे प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया गया है। मालव कवियों की काव्यात्मक समस्याएं, चित्तौड की मोज-सभा में चौला द्वारा समस्या पूर्तियां,

---

(111) मेरु तुंग सूरिकृत प्रबंध चिंतामणि, पृ० १२५

श्रीमदण हिल पुर पत्तने बृहति श्री भीमदेवे साम्राज्यं पालयति श्री भीमेश्वरस्य पुरे चउला देवी नाम्नी पण्यांगना - - - - तस्थौ। " (१२५)

एवं कनिष्क की नर्तकी मनोज्ञा के दीपराग से प्रज्वलित दीपों को मल्हार राग से बुझाने की चुनौति का चौला द्वारा प्रत्युत्तर आदि के द्वारा युगीन सांस्कृतिक वातावरण का भी सम्यक् निरूपण हुआ है ।

" देश दीवान " में प्रस्तुत तथ्यों के अनुसार अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में काठियावाड, सोरठ, गोहिलवाड, झालावाड, और हालार जैसे राज्यों में विभाजित था ।[1] हालार के अतिरिक्त इन राज्यों का शासन राजाओं की इच्छाओं के पालन को लक्ष्य में रख कर चलता था, किन्तु हालार के " नगर " में लोक मूलक दृष्टिकोण के कारण इसका एक उदार स्वरूप था । राजा, वजीर एवं अन्य अधिकारी वहां भी थे, किन्तु शासन के कार्यों में प्रजा की सम्मति को महत्त्व दिया जाता था ।

कृति के काल की उपर्युक्त परिस्थिति का निरूपण करने के लिये जूनागढ के कालूभेर की अपूर्व रूप सी निस्वत की सृष्टि की गई है । नवाब की वासना-तृप्ति हेतु उसे प्राप्त करने के प्रयत्न में दो नागरों का प्राण खो बैठना, नवाब और पोरबन्दर के राणा सुलतान जीत की सेनाओं द्वारा उसका पीछा किया जाना, एवं अन्ततः वजीर मेरामण के उसकी सुरक्षा के लिये उसे जाम के महल में रखे जाने पर जाम सता द्वारा उसके साथ बलात्कार, निस्वत के प्रणयी चांद गोरी द्वारा उसके पतन की कारण जीवूका की हत्या, राजकीय अपराधी होने पर भी उसके पक्ष को सुनकर उसके साथ न्याय किया जाना, आदि का आयोजन मेरामण के प्रजासम्मत शासन का निरूपण करने के लिये ही किया गया है । आर्थिक और सामाजिक वातावरण के लिये उपन्यास में कोई अवकाश दृष्टिगत नहीं होता । संक्षेप में, अपनी अंगीकृत परिस्थिति को प्रस्तुत करने में लेखक पर्याप्त रूप से सफल कहा जा सकता है ।

" विक्रमादित्य हेमु " एक सामान्य रचना है । इसमें

वातावरण का पक्ष इतने सफल रूप में दृष्टिगोचर नहीं होता, जैसा कि हम अन्य उपन्यासों में देख आये हैं ।

" रा गंगानलियो " पन्द्रहवीं शताब्दी के सोरठ और गुजरात की परिस्थितियों को हमारे सम्मुख प्रस्तुत करता है । इस समय जूनागढ में चूडासमा वंश के अंतिम राजा रा मांडलिक का शासन था एवं गुजरात में इसका समसामयिक था मेहमूद बेगडा । नित्य गंगाजल से स्नान करने के कारण पवित्र रा मांडलिक के शासन में प्रजा सुख-समृद्धि मय जीवन व्यतीत करती थी, किन्तु उसकी उत्तरकालीन विलासिता और महमूद बेगडा की धार्मिक कट्टरता उसके अधः-पतन का कारण बनती है । मांडलिक का नागाजण चारण के साथ मैत्री सम्बन्ध, रानी कुंतादे से संतति का अभाव, मांडलिक की यौवन के उपभोग की उत्कण्ठा, अपने वीशल मंत्री की युवा पत्नी के साथ उसका व्यभिचार, प्रतिशोध की भावना से महमूद बेगडा के दरबार में मांडलिक के विनाश के लिये किये गये वीशल के प्रयत्न, महमूद बेगडा का जूनागढ पर आक्रमण और माण्डलिक की पराजय तथा धर्म-परिवर्तन कर जीवन व्यतीत करना आदि घटनाओं द्वारा लेखक ने युगीन परिस्थितियों का निरूपण किया है । राजनीतिक परिस्थितियों के चित्रण के साथ लेखक चारणी का बलिदान, वाना ठाकुर का कोढग्रस्त होना, रा गंगानलिया के स्पर्श से उसके कोढ का निवारण, नागआई के शाप से मूथा रेढ के शरीर पर वस्त्रों का जलना, नरसैया के चमत्कार, विदेह रतनबाई का उसे पानी पिलाना आदि प्रसंगों द्वारा लेखक ने युग के लोक विश्वास और मान्यताओं का प्रभावपूर्ण चित्रण किया है । इस प्रकार"रा गंगानलियो"में युगीन परि-स्थितियों का एवं लोक-मानस का सुन्दर निरूपण हुआ है ।

" करण घेलो " तेरहवीं शताब्दी के गुजरात के अंतिम राजा करण के पतन से सम्बन्धित है । इस समय आबू, नडूल और सौराष्ट्र के सामन्त इसके अधीन थे । दिल्ली में अलाउद्दीन खिलजी का राज्य था । करण द्वारा

अपने मंत्री माधव की पत्नी के हरण के परिणाम स्वरूप माधव द्वारा प्रेरित होकर अल्पखां और नुसरखां के नेतृत्व में गुजरात पर आक्रमण होता है। युद्ध में अपनी पराजय देख करण यादव राजा रामदेव के देवगढ में आश्रय लेता है और गुजरात हमेशा के लिये मुसलमान शासकों के हाथ में चला जाता है। समाज में ब्राह्मण और जैन धर्म अपना प्रभुत्व बनाये हुए थे। आर्थिक दृष्टि से समस्त राज्य समृद्ध था। कृति की उपर्युक्त परिस्थितियां सर्वथा इतिहास सम्मत है।[1] करण की विलासिता के कारण माधव की पत्नी रूपसुन्दरी का हरण, माधव की प्रतिशोध-वृत्ति, आक्रमण में मुसलमानों की धार्मिक कट्टरता और कूटनीति, के कारण करण की पराजय पर उसकी रानी कौला और कुछ समय पश्चात् पुत्री देवल देवी का मुसलमानों के हाथ में पडना, आदि घटनाओं के द्वारा करण के राजनीतिक पतन का चित्र प्रस्तुत किया गया है। दशहरे का उत्सव, और राजकीय सवारी, धार्मिक प्रश्नों पर परिसंवाद, यज्ञ-यागन, ~~भैरवी~~ भैरवी उपासना, भूत-प्रेत सम्बन्धी अंध-विश्वास, तथा सती प्रथा आदि प्रसंगों द्वारा लेखक ने कृति के परिचय[2] में व्यक्त अपने लक्ष्य के अनुसार युगीन वातावरण को सम्यक्रूप में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया है, किन्तु सुधी समीक्षकों के अनुसार इसके सामाजिक पक्ष का चित्रण निजी स्थल-काल के रंगों से रंगा हुआ है।[3] अतः वातावरण के निरूपण में लेखक पूर्णतया सफल नहीं कहा जा सकता।

१ (i) डा० कमेसेरियट, हिस्टरी आफ गुजरात, पृ० १-७
  (ii) डा० धारैया, गुजरातनो इतिहास, पृ० १७१-७२

२ करणघेलो, प्रस्तावना, पृ० १

३ (i) डा० धीरुभाई ठाकर, अर्वाचीन गुजराती साहित्यना विकासनी रूपरेखा, पृ० ५७
  (ii) श्री नगीनदास पारेख, ग्रंथ (१९६६) दिसम्बर, पृ० ३०

" बैक्सी का मजार ", " झांसी की रानी लक्ष्मीबाई " के बाद अंग्रेजी शासन के विरुद्ध अठारह सौ सत्तावन के विद्रोह पर लिखा गया दूसरा उपन्यास है। अंग्रेजों की कूटनीति के कारण भारतीय राज-परिवारों की दयनीय स्थिति और भारतीय सिपाहियों के प्रति अंग्रेजों के घृणा और अपमानजनक व्यवहार से युक्त इसका राजनीतिक परिवेश भी ठीक वैसा ही है, जैसा हम पूर्ववर्ती अध्याय में " झांसी की रानी " के सम्बन्ध में प्रस्तुत कर आये हैं। अन्तर केवल यही है कि यहां यह विद्रोह दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह को केन्द्र में रख कर निरूपित किया गया है। दिल्ली के शाह हसन असकरी के प्रयत्नों के परिणाम स्वरूप भारतीय सिपाहियों का मेरठ की छावनियों में छिपे छिपे गोष्ठियों में मिलना, अपमानजनक व्यवहार करनेवाले अंग्रेज सफसरों की अवज्ञा कर समस्त भारत से ब्रिटिश शासन को उखाड फेंकने की योजनाएं बनाना, चर्बीवाले कारतूसों के प्रयोग करने के आदेश की अवज्ञा के परिणाम स्वरूप मेरठ की लम्बोडी पलटन के सिपाहियों को सैनिक अदालत द्वारा ५-१० वर्ष कैद की सजा देना, जनता द्वारा उस दिन शाम को नगर में आये सिपाहियों की हंसी उडाना, और परिणामतः मेरठ के सिपाहियों का सशस्त्र विद्रोह कर बंदी सिपाहियों को मुक्त कर उनके साथ दिल्ली पहुंचना, वहां ५४ वीं रेजीमेन्ट के सिपाहियों द्वारा उनसे गले मिल मिलकर उनका स्वागत करना, बादशाह को अपने स्वतंत्रता संग्राम के नेता के रूप में चुन कर " बादशाह जिन्दाबाद " " इनक्लाब जिन्दाबाद " के नारों से आकाश गुंजा देना तदनन्तर स्वतंत्रता संग्राम का लखनऊ, कानपुर आदि क्षेत्रों में प्रसार और निरपराध अंग्रेजों की हत्याएं, अंग्रेजों द्वारा इसे कुचल देने के लिये अपनी समस्त सैन्य शक्ति द्वारा प्रबल प्रयास आदि के आयोजन से लेखक उक्त विद्रोह एवं स्वातंत्र्य-संग्राम का सम्यक् निरूपण किया है। अतः संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक परिवेश का समुचित चित्रण कर, १८५७ के इस आन्दोलन को समग्रतया निरूपित करने में लेखक सर्वथा सफल कहा जा सकता है।

निष्कर्ष :

उपर्युक्त अध्ययन के आधार पर इस वर्ग के उपन्यासों में प्रस्तुत वातावरण के स्वरूप की दृष्टि से हम उन्हें दो रूपों में प्राप्त करते हैं ।

(१) वातावरण के समग्र स्वरूप को प्रस्तुत करने वाले उपन्यास एवं
(२) वातावरण के केवल अभीष्ट पक्ष को प्रस्तुत करने वाले उपन्यास ।

उक्त प्रथम वर्ग में (१) सिंह सेनापति, (२) वैशाली की नगरवधू, (३) चीवर, (४) बाणभट्ट की आत्मकथा, (५) सोमनाथ, (६) गढ कुंडार, और (७) मृग नयनी का समावेश होता है । इनमें युग की समस्त परिस्थितियों का एवं मानव जीवन का सर्वांगीण चित्र प्राप्त होता है । इनमें " गढ कुंडार " और " मृगनयनी " अपने प्रादेशिक वातावरण के निरूपण की विशेषता के लिये एवं " बाणभट्ट की आत्मकथा " अपने सांस्कृतिक निरूपण के लिये विशेष रूप से प्रसिद्ध हैं ।

वातावरण के अभीष्ट पक्ष को प्रस्तुत करनेवाले उपन्यासों में उपर्युक्त प्रथम वर्ग में निर्दिष्ट उपन्यासों के अतिरिक्त सभी समन्वयान्वित ऐतिहासिक उपन्यास आते हैं । इनमें से " आचार्य चाणक्य ", " पुष्यमित्र ", " बेकसी का मजार ", " गुजरातनो नाथ ", " राज संन्यासी ", " देश दीवान ", " रा गंगाजलियो ", " विक्रमादित्य हेमु " और " करणघेलो " प्रमुखतया कृति के युग के राजनीतिक वातावरण को प्रस्तुत करते हैं । इनमें " बेकसी का मजार " १८५७ के देश व्यापी ब्रिटिश शासन के प्रति विद्रोह एवं स्वातंत्र्य-आन्दोलन की सशक्त अभिव्यक्ति है । " दिग्विजय " में सांस्कृतिक पक्ष का निरूपण कृतिकार का मुख्य लक्ष्य रहा है ।

" जय सोमनाथ ", " कुम कुम अने आशका ", " चोला देवी "

तथा " पृथिवी वल्लभ " एक घटना या प्रसंग विशेष के वातावरण को निरूपित करते हैं। प्रथम दो में सोमनाथ पर महमूद के आक्रमण का निरूपण है, तो " चौला देवी " में चौला के " रानी " पद को लेकर उपस्थित हुए पाटण के आन्तरिक संघर्ष को चित्रित किया गया है। श्री मुंशीजी का " पृथिवी वल्लभ " मुंज और मृणाल के प्रणय प्रसंग को रोचक और प्रभावपूर्ण रूप में प्रस्तुत करता है।

कथावस्तु में निर्दिष्ट किये अनुसार " सिंह सेनापति ", " चीवर " तथा " कुम कुम अने आशका " में वातावरण के निरूपण में लेखक के राजनीतिक सिद्धान्तों का प्रभाव भी दृष्टि गोचर होता है। इन तीनों में पात्रों के आर्थिक शोषण की यथावकाश सशक्त, अभिव्यक्ति की गई है। " नीलकंठनुं बाण " अपने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में चामुण्ड के व्यक्तित्व के मनोविश्लेषणात्मक निरूपण के लिये एक अविस्मरणीय कृति है। प्रयोग-काल के प्रतिनिधि उपन्यासों के रूप में गृहीत " पुष्य मित्र " और " करण घेलो " के वातावरण में देश-काल सम्बन्धी कुछ विसंगतियां भी दृष्टिगत होती हैं, जिन्हें " विधा " के प्रायोगिक अवस्था में होने के कारण सहज-संभव कहा जा सकता है।

उपर्युक्त अध्ययन का विहंगावलोकन करने पर हम इस निष्कर्ष पर आते हैं, कि हिन्दी के अधिकांश ऐतिहासिक उपन्यासों में वातावरण के समग्र रूप का चित्रण हुआ है, एवं गुजराती के अधिकांश उपन्यास अपने अभीष्ट पक्ष का ही निरूपण करते हैं।

भाषा-शैली :

उपन्यास जन-मन के रंजन की विधा है। अतः यह आवश्यक है कि उपन्यास में प्रयुक्त होने वाली भाषा सरल, सरस, प्रवाहमयी और जनभोग्य

होनी चाहिये। विषय-वस्तु, पात्र और परिस्थिति के अनुसार उसका सरल और गंभीर होना भी उतना ही आवश्यक है। समृद्ध भाषा-शैली के द्वारा ही सामाजिक और ऐतिहासिक तथ्य बोधगम्य रूप में प्रस्तुत किये जा सकते हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों में यह नितान्त आवश्यक है कि उनमें उपन्यास के देश-काल, पात्रों की स्थिति और उनके आचार-विचार की ऐतिहासिकता उपन्यास में प्रयुक्त भाषा से स्पष्टतया व्यक्त होनी चाहिए। उपन्यासकार उनमें शैली के विभिन्न भेदों और अलंकरणों का निजी आवश्यकता के अनुसार प्रयोग कर सकता है।

प्रस्तुत वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में प्रयुक्त भाषा-शैली का समग्रतया अध्ययन निम्नांकित तथ्यों के आधार पर किया जा सकता है।

(१) भाषा में कथानक के वहन की क्षमता,

(२) शैली-वैविध्य का कृति के उत्कर्षापकर्ष में योगदान।

भाषा में कथानक के वहन की क्षमता :

प्रस्तुत वर्ग के सभी उपन्यासों में उनके सम्बन्धित घटना-प्रसंग बहुत ही सरल और रोचक वर्णन के साथ उपस्थित किये गये हैं। पाठक उन्हें बड़ी सरलता और रुचि के साथ पढ़ता चला जाता है और उपन्यास के अन्त में एक आत्म-संतोष की अनुभूति करता है। यही तथ्य कथानक के वहन में लेखकों की भाषाकीय क्षमता का प्रमाण है।

इनके पात्रों के व्यक्तित्व के अंकन में भी भाषा का बड़ा आकर्षक और प्रभावशाली रूप दृष्टिगत होता है। कृति के आरम्भ में पात्रों के शब्द-चित्र और आकृति वर्णन प्रस्तुत किये गये हैं। इसके पश्चात् विभिन्न परिस्थितियों में उन्हें रख कर उनकी मानसिक प्रतिक्रियाएं व्यक्त कर उनका

चारित्रिक उन्मेष किया गया है। इससे सम्बन्धित कुछ एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य हैं। सर्व प्रथम " वैशाली की नगरवधू " में सम्राट् बिम्बिसार का शब्द चित्र देखिये — " सम्राट् बिम्बिसार की आयु पचीस वर्ष की थी। उनका रंग उज्ज्वल और गौर वर्ण का था। आँखें बड़ी बड़ी और काली थीं। कद लम्बा था, व्यक्तित्व प्रभावशाली था। परन्तु उनके चित्त में दृढ़ता न थी। स्वभाव कोमल और हठी था। "[1] यहाँ सम्राट के शब्द-चित्र के साथ उनकी स्वभावगत विशेषताओं की ओर भी अंगुलिनिर्देश कर दिया गया है। " गढ़ कुंडार " के नागदेव और हेमवती " मृगनयनी " की निन्नी, " वैशाली की नगरवधू " की अम्बपाली, " गुजरातनो नाथ " के मुंजाल, मीनलदेवी, और काक, सोमनाथ-आक्रमण से सम्बन्धित उपन्यास-त्रयी में भीमदेव, चौला और महमूद प्रभृति के कतिपय पात्रों के शब्द चित्र और रेखांकन भाषा के वर्णन-कौशल को व्यक्त करते हैं। व्यक्तित्व के विकास की अभिव्यक्ति में प्रयुक्त भाषा का एक चित्र देखिये — " इस प्रकार देह के प्रत्येक कण और हृदय की धड़कन के साथ पुत्री बड़ी और बड़ी होती गई। गुलाब का पौधा मानो बड़ा हो गया। इसमें गुलाब के फूल भी खिलने लगे। खेलती-कूदती पुत्री रूप-राशी सम्पन्न बाला बनी। मंद समीर में फूल की डाली हिंडोला लेती है, ऐसे नव यौवन के मलयानिल में वह झूलने लगी। "[2] यहाँ आलंकारिक रूप में निस्वत (देश दीवान) के गुलाब से मोहक, सुवासित और मादक यौवन की बड़ी सरल भाषा में अभिव्यंजना की गई है। अवांछनीय परिस्थितियों में जीवनयापन की विवशता से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया अम्बपाली के व्यक्तित्व में दृष्टिगत होती है। अपनी इच्छा के विरुद्ध वैशाली की जनपद-कल्याणी बनने पर उसके हृदय का आक्रोश निम्नांकित शब्दों में व्यक्त होता है — " मैं वैशाली

१ वैशाली की नगरवधू, पृ० १७०

२ देश दीवान, पृ० २०

के स्त्रैण पुरुषों का पूरा बदला लूंगी । मैं अपने स्त्रीत्व का पूरा सौदा करूंगी । मैं अपनी आत्मा का हनन करूंगी और उसकी लोथ इन लोलुप गृद्धों को उन्हीं की प्रतिष्ठा और मर्यादा के दामों पर बेचूंगी । "[1] यहां अम्बपाली के हृदय की कटुता बड़ी तीक्ष्णता के साथ प्रकट हुई है । इस प्रकार के अनेक उदाहरण इस वर्ग के उपन्यासों में विद्यमान हैं ।

प्रस्तुत वर्ग के उपन्यासों में निरूपित विविध परिस्थितियों का विवेचन हम इससे पूर्व " वातावरण के अन्तर्गत प्रस्तुत कर आये हैं । इसके आधार पर यह कहा जा सकता है कि उनसे सम्बद्ध देश-काल और वातावरण के निरूपण में भाषा का योगदान प्रशस्य रहा है । उदाहरण के लिये " बेकसी का मजार " में प्रस्तुत मेरठ के सैनिकों का विद्रोह और दिल्ली में आकर उनका ५४ वीं रेजिमेन्ट के सिपाहियों द्वारा उनका स्वागत और परस्पर गले मिलना तथा " बादशाह जिंदाबाद ", " इन्कलाब जिन्दाबाद " के नारों से आकाश को गुंजा देना आदि के दृश्यांकन में लेखक की भाषा का सामर्थ्य निखर आया है । इसी प्रकार "सिंह सेनापति ", " वैशाली की नगरवधू " में गणराज्यों और राज्य तंत्रात्मक राज्यों के संघर्ष का, सोमनाथ से सम्बन्धित तीनों उपन्यासों में महमूद के आक्रमण का, एवं शेष उपन्यासों में उनसे सम्बद्ध काल के प्रभावशाली चित्रण में भी भाषा की क्षमता का स्वरूप दृष्टिगत होता है ।

२ शैली वैविध्य का कृति के उत्कर्षापकर्ष में योगदान :

पूर्ववर्ती पृष्ठों में यह निर्दिष्ट किया जा चुका है कि घटनाओं के वर्णन, पात्रों के चारित्रिक विकास एवं परिस्थितियों के निरूपण में लेखकों द्वारा वर्णन प्रधान शैली का व्यापक प्रयोग हुआ है । वस्तु-वर्णन, दृश्यांकन,

१ वैशाली की नगरवधू, पृ० ३१

और प्रसंग के चित्रण में लेखकों के भाषा-कौशल के अनेक उदाहरण इस वर्ग की कृतियों में विद्यमान हैं। उदाहरण के लिये श्री हर्ष की सभा के एक प्रसंग का निरूपण देखिये। सम्राट् के सम्मुख भव्य आसनों पर कविगण के बैठने और ताम्बूल करंक वाहिनी के पान बना कर देने पर रसिक कवि, मातंग दिवाकर टेढी दृष्टि से उसे देखकर कहता है - " सुंदरि, पहले तेरी दृष्टि चूने की तरह काट जाती है, किन्तु तदनन्तर जब मुस्कराहट से तू गुलाबी रंग चढा देती है। तब कट कट के हृदय सुपारी की भांति गिरने लगता है। धन्य है वह पान जो तेरे अधरों को छूकर उन्हें रंगता है। "[1] यहां कवि की भाषा में उक्त प्रसंग के अलंकृत वर्णन के साथ माधुर्य गुण और रतिभाव की भी सुन्दर अभिव्यक्ति हुई है। मान्यखेट में भिक्षा के लिये निकले पृथिवी वल्लभ मुंज के शब्दों में भी ऐसी ही वर्णन की रोचकता दिखाई देती है - " चन्द्रलेखा, तेरी इस पुष्पमाला सी सुकुमार बाहुपाश से प्रणयी (यदि) छूटना चाहे, तो उसे मूर्ख मान कर उसका तिरस्कार करना, कारण कि पृथिवी वल्लभ यह हाथ है या कमल दण्ड, इस भ्रम में एकदम भिक्षा पात्र में तूने क्या डाला, यह देखना ही भूल गया। "[2] ऐसे प्रसंगों के निरूपण में कलात्मकता से वर्णन प्रधान शैली की क्षमता व्यक्त होती है।

" सिंह सेनापति ", " पुष्यमित्र " और " बाणभट्ट की आत्मकथा " आत्म चरित प्रधान शैली में लिखे गये उपन्यास हैं। इनके अतिरिक्त इस वर्ग के शेष सभी उपन्यासों में वर्णन प्रधान शैली का व्यापक प्रयोग हुआ है। उपर्युक्त तीनों उपन्यासों में वर्णन-प्रधान शैली की अपेक्षा नाट्यात्मक शैली का व्यापक प्रयोग हुआ है। पात्रों के चरित्र-चित्रण के साथ देश काल तथा वातावरण के निरूपण के लिये भी यहां कथोपकथन का उन्मुक्त प्रयोग हुआ है।

१ चीवर, पृ० १७१ २ पृथिवी वल्लभ, पृ० १७२

इनके अतिरिक्त प्रस्तुत वर्ग के शेष उपन्यासों में भी विभिन्न दृष्टिकोण से कथोपकथन का प्रयोग किया गया है। इन कथोपकथनों में प्रयुक्त भाषा की सरलता और सरसता कृति को सजीवता प्रदान करती है। अधिकांशतः लेखकों ने वर्णन प्रधान शैली और नाट्यात्मक शैली का सुसमन्वित रूप में प्रयोग किया है।

इनके अतिरिक्त पात्रों के चरित्र की सहज स्वाभाविक अभिव्यक्ति के लिये विश्लेषणात्मक शैली का भी व्यापक प्रयोग हुआ है। इसके सहारे लेखक पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व और मानसिक प्रतिक्रियाओं को पाठकों के सम्मुख खोलता चलता है। " गढ कुंडार " में नागदेव की मनोदशा का चित्र देखिये — " नाग की वह रात बड़ी कठिनाई से कटी। एक ओर सामन्त नाग, दूसरी ओर आहत नाग। एक ओर मनुष्य नाग, दूसरी ओर दर्पयुक्त नाग। एक ओर राज कुमार नाग, दूसरी ओर प्रणयोन्मत नाग। एक ओर वीर नाग, दूसरी ओर उद्धत नाग, एक ओर नाग देव और दूसरी ओर नाग राक्षस। देवता पर राक्षस विजय पा चुका था। " [1] " पृथिवी वल्लभ " में मुंज से मिलने पर मृणाल की मनःस्थिति का भी सुन्दर विश्लेषण द्रष्टव्य है — " अपनी निराधार स्थिति का बोध होते ही, उसकी उद्विग्नता का पार नहीं रहा। उसने बेचैनी में हाथ पैर पछाड़े, मुट्ठियां बंद की, दांत पीसे। सब विचार व्यर्थ लगे। मुंज पापी, लंपट मुंज, विजेता हो गया। वह स्वयं अधम कलंकित हो गई, और इस स्थिति में से निकलने का कोई मार्ग नहीं। " [2] यहां इन पंक्तियों में मृणाल के अंतर्द्वन्द्व का बड़े यथार्थ और प्रभाव पूर्ण ढंग से विश्लेषण किया गया है।

उपरिनिर्दिष्ट शैलियों के कुशल प्रयोग के साथ इस वर्ग के

---

१ गढ थंकडार, पृ० १०६ २ पृथिवी वल्लभ, पृ० १०६

उपन्यासकारों ने यथावकाश भावप्रधान शैली का भी प्रयोग किया है। जीवन में हर्ष-शोक के कई ऐसे क्षण आते हैं, जहां भावों का अतिरेक वक्ता की (पात्र की) भाषा को एक हृदयस्पर्शी और काव्यात्मक रूप प्रदान कर देता है। " चीवर " में वसंतोत्सव के समय गृहवर्मा राज्यश्री के रूप-माधुर्य को देखकर हर्षातिरेक से आल्हादित हो, कह उठता है - " तुम राज्यश्री नहीं, मेरी मनश्री हो। एक एक पल में मुझे प्रतीत होता है, जैसे युग बीत रहे हैं। मैं नहीं समझता प्रेम का यह स्वर्ग त्याग कर लोग राज्य की लिप्सा में क्यों इतना हत्याकांड किया करते हैं।"[1] यहां व्यक्त आल्हाद और उत्कंठा के कारण गृहवर्मा की वाणी काव्यमयी बन गई है। प्रस्तुत वर्ग के अन्य उपन्यासों में भी ऐसे अनेक उदाहरण विद्यमान हैं।

भाषा की रोचकता और उसके कलात्मक निखार के लिये इन उपन्यासों में यथावश्यक अलंकारों के भी सुन्दर प्रयोग मिलते हैं। आचार्य चतुरसेन शास्त्री के " वैशाली की नगरवधू " से निम्नांकित उदाहरण देखिये — " अम्बपाली के होठ हिले, जैसे गुलाब की पंखुड़ियों को प्रातः समीर ने आन्दोलित किया हो, वीणा की झंकार के समान उसकी वाणी ने सुधा-वर्षण किया। "[2] यहां उत्प्रेक्षा एवं उपमा का सहज प्रयोग वस्तु और क्रिया की कलात्मक अभिव्यक्ति के साथ भाषा को भी अलंकृत करता है। श्री मुंशी द्वारा प्रस्तुत मंजरी के सौन्दर्य का चित्र भी भाषा की ऐसी ही कलात्मकता लिये हुए है - " उसके सभी अंग सुविकसित थे, सौन्दर्य पूर्ण थे, किसी अद्भुत शिल्पी की दैवी कला के परिणाम लगते थे। विधाता ने अनुपम सौन्दर्य की रसमूर्ति पैदा की हो, ऐसा लगने वाली इस बाला को देखकर काक स्तब्ध रह

१ चीवर, पृ० २८

२ वैशाली की नगर वधू, पृ० १०

गया । "[1] यहाँ मंजरी के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति में लेखक ने उत्प्रेक्षा का प्रयोग किया है ।

शैली-वैविध्य के प्रयोग के साथ कुछ एक उपन्यासों में पात्रों की स्थिति के अनुसार प्रादेशिक भाषा के प्रयोग भी दृष्टिगत होते हैं । पूर्ववर्ती अध्याय के विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यास " झांसी की रानी " और " अहिल्या बाई " के भाषा-शैली सम्बन्धी विवेचन में जैसा निर्दिष्ट कर आये हैं, उसी प्रकार " गढ कुंडार " और " मृगनयनी " में बुंदेल खंडी के प्रयोग दृष्टिगोचर होते हैं । " गढ कुंडार " के आरंभ में ही अर्जुन कुम्हार की भाषा इसका जीवन्त उदाहरण प्रस्तुत करती है ।[2] श्री वृन्दावनलाल वर्मा के बुंदेलखंडी प्रयोग की भाँति गुजराती के सर्वश्री क० मा० मुंशी, धूमकेतु, चुनीलाल मडिया और मेघाणीजी के उपन्यासों में सोरठ के पात्रों की भाषा में सोरठी का प्रयोग बहुत आकर्षक और रोचक है ।

पात्रों के चरित्र और देशकाल के वातावरण की ऐतिहासिकता के लिये युगीन शब्दावली का भी अपना विशिष्ट महत्त्व है । इस वर्ग के उपन्यासों में पात्रों के व्यक्तित्त्व के काल की सूचक प्राचीन शब्दावली का यथावश्यक प्रयोग किया गया है । सिंह सेनापति, वैशाली की नगर वधू, चीवर, बाणभट्ट की आत्मकथा, आचार्य चाणक्य और पुष्यमित्र जैसे उपन्यासों में पात्र, प्रसंग और परिस्थिति विशेष के सन्दर्भ में यथावश्यक तत्सम और उपयुक्त शब्दावली का प्रयोग किया गया है । " बाणभट्ट की आत्मकथा " में, तो कुछ शब्द-प्रयोग संस्कृत भाषा और बाण की प्रकृति के अनुकूल हैं — उदाहरण के लिये, बालुका राशि, प्रीत हूं, अंग मोटन, दीर्घदीर्घायित धूसरायमान,

---

१ गुजरातनो नाथ, पृ० १२७

२ गढ कुंडार, पृ० १२-१४ एवं उपन्यास में अन्यत्र भी

निखिलानंद संदोह की विग्रह माधुरी आदि शब्दों का प्रयोग हिन्दी की प्रकृति के अनुकूल नहीं है। यों भाषाकीय कुछ एक क्षतियां भी वृन्दावनलाल वर्मा [1] और श्री क० मा० मुंशी [2] जैसे लब्ध प्रतिष्ठ लेखकों में भी मिलती हैं, किन्तु उनसे कृति का कलापक्ष प्रभावित नहीं होता। मध्यकालीन भारत के कथावस्तु से सम्बद्ध उपन्यासों में संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग कम है, तथा उनके तत्युगीन मुसलमान पात्रों के सम्बन्ध में अरबी-फारसी की प्रचलित शब्दावली का आवश्यक प्रयोग भी दिखाई देने लगता है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि इस वर्ग के उपन्यासों में भाषा अपने समृद्ध रूप में दृष्टिगत होती है। शैली-वैविध्य अलंकार, प्रादेशिक शब्दावली तथा पात्र, और परिस्थिति के अनुरूप बदलता भाषा का मनोरम रूप उसकी उत्कृष्टता और प्रभावात्मकता का अभिव्यंजक है।

उद्देश्य और जीवन-दर्शन :

प्रस्तुत अध्याय के आरंभ में " कथावस्तु " के अनुशीलन में हम यह इंगित कर आये हैं कि इस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यासों में से प्राचीन भारत से सम्बन्धित उपन्यास भारतीय इतिहास के गौरवपूर्ण पक्षों को प्रतिबिम्बित करते हैं, तो मध्यकालीन ऐतिहासिक उपन्यास भारतीय जन मानस की किसी न किसी चेतना को लिये हुए हैं। इससे पूर्व प्रथम अध्याय में भी हम यह निर्दिष्ट कर आये हैं कि सृष्टि के वैविध्य की भाँति ऐतिहासिक उपन्यास के उद्देश्य भी विविध हो सकते हैं, उन्हें किसी संख्या में बांधना दुष्कर है। फिर भी स्थूल रूप से ऐतिहासिक उपन्यास के निम्नांकित उद्देश्य हो सकते हैं।

(१) अतीत के प्रति प्रेम और उसका पुनः संस्थापन,

१ डा० शशिभूषण सिंहल, उपन्यासकार वृन्दावनलाल वर्मा, पृ०२४६

२ श्री नरसिंहराव भोलानाथ, उद्बोधन, " गुजरातनो नाश," पृ० ११

(२) राष्ट्रीय गौरव का उन्मेष,

(३) अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति,

(४) अतीत की मनोवैज्ञानिक व्याख्या,

(५) इतिहास के प्रति न्याय भावना ।

१ अतीत के प्रति प्रेम और उसका पुनः संस्थापन :

इस उद्देश्य को लेकर लिखे जाने वाले उपन्यासों में " सिंह सेनापति ", " बाणभट्ट की आत्मकथा ", " दिग्विजय " और " गुजरातनो नाथ " का समावेश किया जा सकता है । इनमें अतीत के उन महापुरुषों के नीति और मर्यादायुक्त जीवन के आदर्श चित्र प्रस्तुत किये गये हैं, जिनके अध्ययन, मनन और जीवन में तदनुसार आचरण करने से पाठक अपने जीवन को सफल और गौरवान्वित बना सकें । " सिंह सेनापति " में राहुल जी गणराज्य के समर्थक और संरक्षक सिंह का जीवन-चरित्र प्रस्तुत कर व्यक्ति को जीवन में साहसी और अध्यवसायी होने का संदेश देते हैं । " बाणभट्ट की आत्मकथा " में नारी सम्मान की पुनः स्थापना के लिये पूर्व जीवन के आवारा कवि बाण में विकट परिस्थितियों से टक्कर लेने के साहस का निरूपण कर सम्पत्ति के बल पर होने वाले नारी जाति के शोषण के प्रति समाज को उद्बुद्ध करने का प्रयत्न है । " दिग्विजय " में जगद्गुरु शंकराचार्य के द्वारा रूढिवादिता का उन्मूलन कर ईश्वर और धर्म के यथार्थ बोध से जीवन को सन्तुलित और सफल बनाने की ओर अंगुलि-निर्देश है । " गुजरातनो नाथ " में श्री मुंशी पाटण के महामंत्री मुंजाल के निष्पक्ष राजनीतिक व्यक्तित्व द्वारा हुई तत्युगीन गुजरात राज्य की वृद्धि और उसके गौरव की प्रतिष्ठापना करते हैं जिससे इसके पाठकों में गुजरात के स्वाभिमान की भावना अक्षुण्ण रूप से बनी रहे । सम्बद्ध कृतियों के ऊपर प्रस्तुत अध्ययन के आधार पर कहा जा सकता है कि लेखक इनमें अपनी

उद्देश्य-प्राप्ति में सफल रहे हैं ।

२ राष्ट्रीय गौरव का उन्मेष :

आचार्य चाणक्य, पुष्यमित्र, चीवर, मृगनयनी, चौला देवी, राजसंन्यासी, देश दीवान, विक्रमादित्य हेमु और केकसी का मनार इस उद्देश्य से प्रेरित होकर लिखे गये हैं । इनमें ऐसे महापुरुषों के जीवन-चरित्र हैं, जिन्होंने देश और राष्ट्र के गौरव को उन्नत और अक्षुण्ण बनाये रखने के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर कर अपने देश-प्रेम या राष्ट्र-प्रेम का अनन्य उदाहरण प्रस्तुत किया है । आचार्य चाणक्य भारत पर सिकन्दर के आक्रमण के समय देश की विघातक स्थिति का अवलोकन कर तक्षशिला विश्व-विद्यालय के कार्य को छोड, देश में घूम घूम कर अपने शिष्य चन्द्रगुप्त की सहायता से विलासी सम्राट् धनानन्द का संहार कर आसिंधु-ब्रह्मपुत्र तक एक शक्तिशाली साम्राज्य की स्थापना कर देश को बाह्य आक्रमणों से अभय कर देते हैं । इसी भाँति " पुष्यमित्र " में मौर्य साम्राज्य के अंतिम सम्राट् बृहद् रथ की स्त्रैण वृत्ति के कारण देश को पतन से बचाने के लिये सेनापति पुष्यमित्र द्वारा उसका वध करवा कर " सम्राट् से साम्राज्य महान है ", के विचार को प्रस्तुत किया गया है । " चीवर " में लेखक " दिव्या " में निरूपित बौद्ध धर्म के पराभव का प्रत्युत्तर देता है । राज्यश्री और हर्ष को बौद्ध धर्म का अनुयायी बना एवं लोक कल्याण के अनेक कार्यों द्वारा लेखक यहाँ बौद्ध धर्म की महा विजय व्यक्त करता है । श्री हर्ष के जीवन में विक्रम के साथ शील के गौरव का निरूपण आधुनिक आचारहीन समाज के सम्मुख लेखक शील का एक महान आदर्श प्रस्तुत करता है । " मृगनयनी " में मानसिंह और मृगनयनी के चरित्र द्वारा वैयक्तिक और लौकिक कर्तव्यों में सामंजस्य द्वारा आदर्श लोक-राज्य की स्थापना में सहयोगी होने का संदेश है । श्री धूमकेतु के " चौलादेवी " और " राजसंन्यासी " में चौला के अपने राज्य को महान् और बाणावली भीमदेव को महान् राजा के

रूप में देखने के लिये किये गये त्याग और बलिदान का निरूपण है। इसके साथ ही अविस्मरणीय है, दामोदर मेहता, जो पाटण पर अवंती के आक्रमण को रोकने के लिये महा-मंत्री के पद का त्याग कर अवंती में पाटण के राजदूत बन कर रहते हैं। " देश दीवान " में लेखक सामन्त शाही के युग में वनीर मेरामण (मेरू भी खवास) के लोक-हित पर आधारित शासन का चित्र प्रस्तुत कर उसके आदर्श व्यक्तित्व को आज के सुधी पाठकों और शासकों के सम्मुख रखना चाहता है, जिससे वह शासन-कार्य में उनके लिये एक प्रेरणा मूर्ति बना रहे। " विक्रमादित्य हेमु " श्री हेमचन्द्र के सहयोग से धर्म निरपेक्ष और लोक-हित के सिद्धान्तों पर शेरशाह द्वारा अफगान सल्तनत की स्थापना और उसके उत्तराधिकारियों के अयोग्य सिद्ध होने पर सल्तनत की रक्षार्थ युद्ध कर विक्रमादित्य बनने के श्री हेमचन्द्र के पुरुषार्थ का आदर्श पाठकों के सम्मुख रखना लेखक का मुख्य उद्देश्य है। " बेकसी का मजार " में लेखक का मुख्य उद्देश्य है १८५७ के विद्रोह और देशव्यापी स्वातंत्र्य संग्राम की राष्ट्रीय गौरव के उपयुक्त साहित्यिक अभिव्यक्ति।

३ अतीत की आधुनिक व्याख्या और उसके द्वारा वैयक्तिक दृष्टिकोण की अभिव्यक्ति :

" गढ कुंडार ", " मृग नयनी ", " बाणभट्ट की आत्मकथा " " जय सोमनाथ ", " करण घेलो " और " रा गंगाजलियो " आदि उपन्यास अपने मुख्य अथवा अवान्तर उद्देश्य की दृष्टि से इस वर्ग के अन्दर आते हैं। " गढ कुंडार " में श्री वर्माजी सामंती वृत्तियों के कारण खंगार वंश के सर्वनाश का निरूपण कर पाठकों को उनसे ऊपर उठने का संकेत करते हैं। साथ ही नाग देव और अरिन्दम की प्रणय-कथाओं से वे यह भी ध्वनित करना चाहते हैं कि वासनामूलक प्रेम अधोगामी है और प्रेम का स्वस्थ और संयत स्वरूप ही मानव जीवन का उन्नायक है। " गढ कुंडार " और " मृगनयनी "अपने इन दोनों

उपन्यासों में तारा-दिवाकर तथा अटल और लाखी की प्रासंगिक कथाओं द्वारा वे समाज को अपनी रूढ़िवादिता से ऊपर उठने की आवश्यकता पर भी जोर देते हैं। आधुनिक राष्ट्रीयता के परिप्रेक्ष्य में यह वांछनीय भी है। " बाण भट्ट की आत्मकथा " में लेखक अवान्तर उद्देश्य के रूप में महामाया द्वारा बाह्य आक्रमणों से अपनी रक्षा के लिये समस्त प्रजा-जन को दुर्भेद्य रूप में एक होकर आत्म सन्नद्ध होने का संदेश देता है। " जय सोमनाथ " में लेखक सोमनाथ पर महमूद के आक्रमण के मूल में निहित तत्कालीन विघटन पूर्ण राजनीति और देवदासी प्रथा तथा कापालिकों की वीभत्स पूजा से युक्त अनाचार पूर्ण धार्मिक परिस्थितियों को उत्तरदायी बताता है। " करण घेलो " और " रा गंगा-नलियो " में विलासिता के कारण सोलंकी और चूडासमा वंश के पाटण और जूनागढ के अंतिम राजाओं के पतन का चित्रण कर सुधी पाठकों को वासना और विलासिता से ऊपर उठने में निहित मानव-कल्याण की ओर अंगुली-निर्देश है। " सोमनाथ " और " वैशाली की नगरवधू " में आचार्य चतुर सेन शास्त्री ब्राह्मणों को वर्णसंकरता और राजनीतिक कूटनीतियों के कारण होने वाले स विनाशों का मूल बतलाकर उनके उन्मूलन की ओर इंगित करता है। जातिमुक्त जैन और बौद्ध धर्म के प्रभाव का निरूपण कर वर्ण-व्यवस्था और ब्राह्मण धर्म पर भी उसने अपना आक्रोश व्यक्त किया है।

४ अतीत की मनोवैज्ञानिक व्याख्या :

" सोमनाथ ", " कुम कुम अने आशका ", " पृथिवी वल्लभ " और " नीलकण्ठनुं बाण " प्रस्तुत उद्देश्य को लेकर लिखे गये हैं। इनमें लेखक ने अतीत घटनाओं और उनके पात्रों की मनोवैज्ञानिक व्याख्या द्वारा मानव मन की जिज्ञासाओं और शंकाओं का समाधान प्रस्तुत किया है। " सोमनाथ " में इतिहास के क्रूर, बर्बर, नर संहारक महमूद को चौला (सोमना) के आंचल की

छाया में गजनी भेज लेखक उसके चरित्र के मानवीय पक्ष का निरूपण करता है। श्री मडिया भी अपने " कुम कुम अने आशका " में उसे अपने अभियान में संहार के साथ भी मेंहदी बेगम के स्वास्थ्य के लिये चिंतित बताकर तथा अन्त में बहुला की समाधि पर उसे अश्रुसिक्त दिखा कर उसके अन्तर में विद्यमान मानव-मन की अभिव्यक्ति करते हैं। " पृथिवी वल्लभ " और " नीलकण्ठनुं बाण " में मृणाल और चामुंड के व्यक्तित्व में आरोपित वैराग्य और तपस्या से दमित वासना अनुकूल परिस्थितियों में अपनी प्रबलता के साथ उभर कर उन्हें किस प्रकार दयनीय बना देती है, इसका प्रभावशाली चित्रण किया है। " वैशाली की नगरवधू " में वैशाली पर मगध के आक्रमण के मूल में भी लेखक अम्बपाली के नारी-अधिकार से वंचित होने पर आहत नारी के प्रतिशोध की भावना की अभिव्यक्ति की गई है।

५ इतिहास के प्रति न्याय-भावना :

" चौलादेवी " और " कुम कुम अने आशका " इस लक्ष्य से युक्त उपन्यास हैं। अपने इष्ट पात्रों के सम्बन्ध में जहां लेखक अनुपयुक्त कथन और उनका अनुपयुक्त चित्रण पाता है, वहां उनके प्रति उसकी न्याय-भावना उनके सम्बन्ध में अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने के लिये बाध्य करती है। " प्रबंध चिंतामणि " में चौला को एक पण्यांगना (वीरांगना) की संज्ञा से अभिहित किया गया है।(यहीं इसके नाम के " बकुला ", एवं " बउला " पाठान्तर भी विद्यमान हैं)। श्री धूमकेतु इसके सम्बन्ध में निजी दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए उसे श्री और सरस्वती तथा त्याग और तपस्या की प्रतिमूर्ति के रूप में चित्रित कर उसे वारांगना की अपेक्षा देवांगना के रूप में प्रस्तुत करते हैं। श्री मडिया बहुला (चौला) को भीमदेव की रानी के पद के योग्य सिद्ध करने के लिये उसे पाटण के सुभट-विहार की लक्ष्य-वेध प्रतियोगिता में भीमदेव के विजयी प्रतिस्पर्धी के रूप में निरूपित किया है।

तुलनात्मक दृष्टि से देखने पर हिन्दी और गुजराती के इस वर्ग के ऐतिहासिक उपन्यास उद्देश्य की उपर्युक्त प्रायः सभी दिशाओं में समान ठहरते हैं, किन्तु " राष्ट्रीय गौरव के उन्मेष " में हिन्दी के आचार्य चाणक्य और " बेकसी का मजार " राष्ट्रीय धरातल के उपन्यास हैं, जबकि गुजराती के ऐतिहासिक उपन्यासों में उनका अभाव है। दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि इतिहास के प्रति न्याय-भावना की सजगता का अभाव भी कतिपय उपन्यासों में दृष्टिगोचर होता है। जैसा कि कथानकों की ऐतिहासिकता के अनुशीलन में हम लक्ष्य कर चुके हैं कि आचार्य चतुरसेन शास्त्री के " सोमनाथ " तथा मिश्रबन्धुओं के " पुष्यमित्र " जैसे उपन्यासों में कल्पना का प्रयोग तथा वातावरण की सृष्टि इतिहास से हटकर हुई है। कहा जा सकता है कि इनमें स्वच्छन्दता से काम लिया गया है। इस वर्ग के गुजराती के उपन्यासों में ऐसी प्रवृत्ति नहीं दृष्टिगोचर होती। उनके लेखक कल्पना के संयोजन पात्रों की मनोवृत्ति के विश्लेषण आदि में इतिहास के प्रति प्रायः सजग हैं।

इस वर्ग के उपन्यासों तथा पूर्ववर्ती अध्यायों में विवेचित विशुद्ध ऐतिहासिक उपन्यासों में प्राप्त उपरिनिर्दिष्ट सजगता वातावरण-प्रधान तथा कल्पना-प्रधान उपन्यासों में अपेक्षाकृत क्रमशः न्यूनतर मात्रा में दिखाई पड़ती है। उनके लेखक ऐतिहासिक तथ्य से केवल उसी सीमा तक सम्बद्ध रहते हैं, जहाँ तक उनकी ऐतिहासिकता नितान्त अप्रतीतिकर न हो सके। अतः यह स्वाभाविक ही है कि ऐसे उपन्यासों के वस्तु-गठन में लेखक अधिक स्वतंत्र रह सकता है जो कि परवर्ती अध्ययन का विषय है।

ooooooo